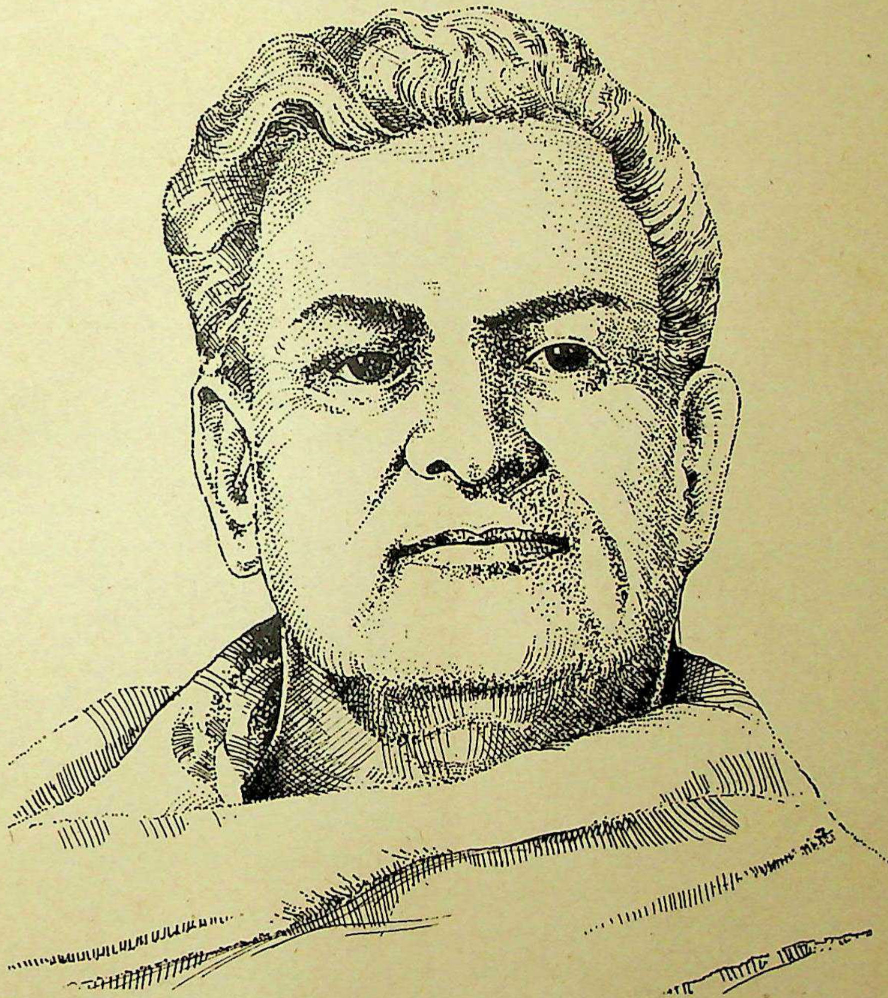
राहुल सांकृत्यायन : RAHUL SANKRITYAYAN

उ० प्र० राज्य पुरातत्व संगठन, लखनऊ

समर्पण



राहुल सांकृत्यायन

९ अप्रैल १८९३ १४ अप्रैल १९६३

राहुल सांकृत्यायन

1993 का वर्ष एक ऐसे फक्कड़ सैलानी का शताब्दी वर्ष है जिनकी तुलना उस कारवां से की गयी है जो रोज़ नये रास्ते, नयी मंज़िलों से गुज़रता तरह-तरह के तजुर्बे बटोरता चलता है । शायद इसीलिए खुद उन्होंने अपनी जिन्दगी के सफर की दास्तां एक सफरनामे में बयान की है। इस जन्म-जात सैलानी ने जितना ज्यादा गाफ़िल होकर दुनिया को परखने की कोशिश की उतना ही उसकी गहराइयों में पैठता गया । कोई ठहराव उसे कहीं बांध न पाया , वह तो 'जिन खोजा तिन पा कर' खुलता चला गया । विलक्षण जिज्ञासा और फ़कीरी मिजाज़ ने उन्हें एक के बाद दूसरी 'दुनिया' की सैर करायी । सैर ही उनका दीन-ओ-ईमान बन गया, यहां तक कि उन्होंने 'घुमक्कड़ धर्म' नाम का एक मज़हब चलाया और उसे शास्त्रीय आधार देने के लिए बाकायदा एक 'शास्त्र' की रचना भी कर डाली। यह उनकी शख्सियत का एक रुख़ है, इसमें कई और अनोखे पहलू मिला दिये जायें तो वह बेमिसाल हस्ती बनती है जो देश-दुनियां में 'राहुल सांकृत्यायन' के नाम से मशहूर हुई ।

उनसे मिलने वालों की स्मृतियों में उनकी सम्मोहक छवि रची-बसी है । चौड़े माथे, फैली छाती और मजबूत कन्धों वाले इस छह फुटे यायावर को आदिम आर्य, कद्दावर पठान, बलवान मल्ल व शाल के दरख्त जैसा और सहज विमोहिनी काया वाला बताया गया है । मुस्कराता हुआ तेजोमय गौर मुखमण्डल बुद्ध और विवेकानन्द की तरह आभामण्डल से दीप्तिमान रहता । आंखों में करुणा द्रवीभूत रहती । बच्चों की तरह साफ और खुला हुआ स्वभाव मक्खन जैसा नरम, और व्यवहार-सादा, भद्र, अनुशासित और नपा तुला* ।

"एक ऐसा मनुष्य जो बुद्ध से मिलता जुलता है, जो जीव मात्र के प्रति दुर्भावना से मुक्त है, जिसका दृष्टिकोण विश्वव्यापी है, जो पूर्ण रूप से सुस्थिर और शान्त है, जिसके पास बच्चे आपसे आप दौड़ पड़ते हैं, जो अगर कहे कि 'मेरे पीछे आओ' तो मनुष्य उनके पीछे उसी प्रकार चल पड़ेगा जैसे वह गौतम या ईसा मसीह के पीछे-पीछे चलता था ।"[8]

लोग उन्हें राहुल, राहुल जी, राहुल बाबा, महापण्डित, घुमक्कड़ राज, पण्डित जी और रामोदर साधू के नाम से भी जानते हैं । इनमें से एक भी नाम उनके माता-पिता नें नहीं रखा, बल्कि ये नाम पड़ाव-दर पड़ाव जैसी जरूरत पड़ी बदलते गये । उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के उनींदे से पंदहा गांव की आज दूर-दूर तक जो चर्चा हो रही है, वह इसी अनोखे आदमी की वजह से । उनका पैतृक ग्राम होने के कारण, इसी जिले का, कनैला गांव भी याद किया जा रहा है । माता कुलवंती देवी और पिता गोवर्धन पाण्डे का नाम उनकी कृतियों और कीर्ति की रोशनी में रोशन हो रहा है ।

उनके विशाल, विलक्षण और प्रायः परस्पर विरोधी बहुआयामी व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में जैसा और जितना लिखा जाना अपेक्षित है, उसके लिए प्राग्धारा के ऐसे कई अंक और हमारी सामर्थ्य दोनों ही छोटे पड़ जायेंगे । फिर भी, अपने इस पुरोधा को – जिन्हें पाकर कोई भी देश और समाज धन्य हो जाये – प्राग्धारा का यह अंक सादर

---

* सन्दर्भ 3,4 (ii), 8, 10, 18, 22–25, 27 विशेष रूप से द्रष्टव्य ।

समर्पित करते हुए, ससंकोच, उनके बारे में कुछ खास-खास बातें यहां रेखांकित करने का यत्न किया जा रहा है ।

II

ननिहाल 'पन्दहा' में जन्म के समय उनका नाम 'केदार नाथ पाण्डे' रखा गया । औसत दर्जे के ब्राह्मण परिवार के सनातनी संस्कार और नाना राम शरण पाठक के फौजी जीवन और शिकार के किस्से उन्हें घुट्टी में मिले। पांच वर्ष की वय में रानी सराय के मदरसे में पढ़ने भेजे गये । नाना उन्हें अंग्रेजी पढ़ाना चाहते थे, लेकिन होनी आगे-आगे पांसे फेंकती चली । नौ बरस की कच्ची उमर में, उर्दू की तीसरी किताब की मार्फत 'नवाज़िन्दा बाज़िन्दा' ने अनायास ही इस भावी घुमक्कड़ का कान फूंक कर कमर कसने के लिए बेक़रार कर दिया -

सैर कर दुनियां की ग़ाफिल ज़िन्दगानी फिर कहां ?
ज़िन्दगी गर रह गयी तो नौजवानी फिर कहां ?

पन्दहा के परिन्दे ने पहली बार पर तौले तो गांव के घोंसले से उड़ कर बनारस तक का रास्ता देख आया । ग्यारह साल के केदार अभी आंखें खोल कर कुछ जानते-समझते कि आजमगढ़ के अहिरौला गांव की आयु में पांच वर्ष बड़ी राम दुलारी से ब्याह हो गया । तेरह की उमर में मां परलोक सिधारीं । चौदह के हुए तो कलकत्ता उड़ दिये । एक घर में झाड़ू बुहारी की । चार मास के प्रवास के बाद लौट आये ।

अगले साल अकेली बहन और नानी भी चल बसीं । पन्द्रह में उर्दू मिडिल और सोलह में हिन्दी मिडिल पास किया । अब तक माँ, नानी, बहन और एक साथी की मौत से उपजी निरपेक्षता ने बहुत बूढ़े हो चले नाना की ढीली पकड़ से निकल कर एक बार फिर कलकत्ता तक उड़ाया। इस बार बनारस के सुंघनी साव की कलकत्ता की दुकान पर चिट्ठियां लिखने का काम मिला । यहां किसी ने नशीली मिठाई खिला दी । मेडिकल कालेज में भर्ती होना पड़ा । कलकत्ता से लौटकर कनैला में रहने लगे ।

सत्रह की गद्दर उमर का लहरा हिमालय तक लहका ले गया । हरिद्वार, बदरी और केदार देखा, वहां से लौटकर तीन लोक से न्यारी काशी नगरी में, चक्रपाणि ब्रह्मचारी के आश्रम में डेरा डाला । संस्कृत 'लघु कौमुदी,' काव्य और व्याकरण पढ़ कर पण्डिताई बढ़ाने लगे । इसी बीच बनारस से चुनार-मिर्जापुर-इलाहाबाद तक पैदल धावा मारा। 1911 में एक नेपाली साधु की सलाह से देवी साधने चले, नवरात्रि पारायण किया । संकल्प लिया कि देवी का साक्षात्कार करेंगे अन्यथा प्राण त्याग देंगे । दर्शन न हुए तो धतूरा खा लिया । लोगों को मालूम हुआ, उपचार कराके बचाया । सरस्वती पत्रिका में छपे यात्रा-विवरणों और स्वामी सत्यदेव परिव्राजक के भाषणों ने चित्त संभाला । दयानन्द स्कूल की सातवीं श्रेणी में भर्ती होकर अंग्रेज़ी और गणित पढ़ने लगे, लेकिन फिर मन उचाट हो चला ।

1912 में सारन के परसा मठ के वैष्णव महन्त बाबा लक्ष्मण दास का शिष्यत्व ग्रहण कर उनके उत्तराधिकारी बन गये । सोचने लगे -

> "परसा कनैला से दूर बहुत दूर एक दूसरी दुनिया होगी जहां न पिता मेरा पीछा कर सकेंगे, न नाना और फूफा और एक बार रजिस्टर्ड बैरागी बन जाने पर भला कौन मुझ पर फन्दा डाल सकेगा ।"[13]

केदार नाथ पाण्डे अब राम उदार दास हो गये । मठ की नियमित पूजा के साथ वे 'सरस्वती' और 'डॉन' भी पढ़ते । लेकिन ऐसे माहौल में कब तक रुकते, ऊब कर कनैला लौटे । फिर, 1913 में हाजीपुर-आसनसोल, आद्रा - खड़कपुर - मद्रास - तिरुमलई आदि, दक्षिण भारत-गुजरात और उज्जैन होकर लौटे तो अयोध्या चले गये । वहां एक मन्दिर में बकरे की बलि का विरोध किया । आर्य समाजियों के सम्पर्क में आये और 'सत्यार्थ प्रकाश' पढ़ी ।

1914 में लौट तो आये पर जनवरी 1915 में फिर उड़ान भरी और आगरा के आर्य मुसाफिर विद्यालय में जा उतरे । दो साल संस्कृत, अरबी, फारसी, धर्मों और इतिहास का अध्ययन किया । मौलवियों और पादरियों से शास्त्रार्थ किया । घुमक्कड़ी चलती रही । इसी अवधि में, 1915 में ही केदारनाथ विद्यार्थी के नाम से आगरा के 'मुसाफिर' में उर्दू और मेरठ के 'भाष्कर' में हिन्दी में लिखने लगे ।

1916 में संस्कृत में पैठ बढ़ाने लाहौर पहुंचे । आर्य समाज का प्रचार करते लखनऊ-कानपुर-इटावा आदि की यात्राएं कीं । अब आर्य समाज से भी मोह भंग होने लगा । 1918 में रूसी क्रान्ति के समाचार पढ़े । 1919 में जलियांवाला बाग के हादसे ने उनके भीतर की बगावती आग में लपट उठा दी और अन्ततः 1921 में गांधी ज़ी के प्रभाव से सधुआई छोड़कर आजादी की अलख जगाने लगे ।

पहला राजनैतिक भाषण खण्डवा में दिया । फिर, परसा को धुरी बना कर जूझने लगे । बाढ़-पीड़ितों, दीन-दुखियों की सेवा की, चरखे बांटे, बोल-बोल कर विदेशी राज के खिलाफ जहर बोया । 31 जनवरी, 1922 को पकड़े गये । जुर्म कुबूला और छह माह की सजा पायी। बक्सर जेल साधक की कुटिया बन गयी । कैदियों को उपनिषद-वेदांत पढ़ायी, ब्रजभाषा में समस्या पूर्तियां कीं, कुरआन का संस्कृत में अनुवाद शुरू किया ।

29 अक्टूबर 1922 को जिला कांग्रेस के महामंत्री चुने गये । गया कांग्रेस में भाग लिया । 1923 के मार्च-अप्रैल में नेपाल में पशुपति नाथ के दर्शन कर के लौटे तो फिर गिरफ्तार हो कर बांकीपुर और वहां से

हजारीबाग जेल भेजे गये । यहां वे सिंहली 'मज्झिम निकाय' में डूबने लगे। केरल के शंकराचार्य स्वामी भारती कृष्णतीर्थ से गणित, आप्टिक्स और ज्योतिष पढ़ी । चार अंग्रेजी उपन्यास हिन्दी में अनूदित किये । फ्रांसीसी और अवेस्तन भाषाएं सीखीं । इस्लाम धर्म की रूपरेखा लिखी । ब्राह्मी लिपि का अध्ययन किया ।

दो वर्ष जेल काट कर निकले तो 1926 में कश्मीर, कारगिल, लद्दाख, न्यूब्रा घाटी और लेह आदि की यात्रा की । वहां के लामाओं से भेंट की और किन्नौर–शिमला के मार्ग से वापस लौटे । गौहाटी कांग्रेस में शामिल हुए । डा० राजेन्द्र प्रसाद जैसे नामी-गिरामी नेताओं के साथ किसान सभा में बोले । 30 मार्च, 1927 को जमींदारी के नाश से पहले परसा न लौटने की प्रतिज्ञा कर ली ।

हजारीबाग जेल के स्वाध्याय के समय लगे बौद्ध धर्म के स्वाद ने पूरी तरह छकने का चस्का लगाया । उस समय लंका में इसके अवसर देख, कलकत्ता की महाबोधि सोसाइटी की मदद से, वहां के विद्यालंकार पिरिवेण में धूनी रमा ली । 16 मई 1927 से उन्नीस माह तक बौद्ध साहित्य पढ़ने और संस्कृत पढ़ाने में ध्यानस्थ रहे । इसी अवधि में इलाहाबाद की सरस्वती पत्रिका के लिए श्रीलंका के विवरण भेजे । पांच भाग में संस्कृत पाठमाला लिखी । सिंहली और फ्रांसीसी में मश्क लगायी। 'पाली टेक्स्ट सोसाइटी' और 'रॉयल एशियाटिक सोसाइटी' के प्रकाशनों का मंथन किया तथा 'त्रिपिटिकाचार्य' की उपाधि पायी ।

पालि साहित्य और उसकी अट्ठ कथाओं के पारायण के बाद संस्कृत बौद्ध साहित्य की थाह लेने की चाह उन्हें, लंका से सांची, कौशाम्बी, कुशीनगर आदि बौद्ध तीर्थों की परिक्रमा करा कर 1929 में, उन्हें हिमालय के उस पार तिब्बत ले गयी । ब्रहमपुत्र के आरी–आरी रेंगते मठों–विहारों में पुरा–पोथियां तजबीजते हुए 'छुओरीं' पहुंचे । नदी पार की और 'ल्हासा' में आसन लगा कर आस–पास के विहारों में पड़ताल जारी रखी । ऐसे कितने ही ग्रंथ उनके हाथ लग गये जो संस्कृत से कभी तिब्बती में अनूदित हुए थे और भारत में कब के गुम हो चुके थे । आचार्य नरेन्द्र देव की व्यवस्था से मिल रहे 50 रुपये के वजीफे और श्रीलंका के भदन्त आनन्द कौसल्यायन के भेजे 3000 रुपये से खरीद कर और भेंट में मिली ढेरों दुर्लभ पोथियाँ खच्चरों पर लाद कर जब वे भारत ले आये तो देश–परदेश सब जगह उनकी प्रतिभा का डंका बजने लगा । मशहूर रूसी विद्वान श्चेर्बात्स्की ने इन खोजों से प्रभावित हो कर उनको रूस आने का बुलावा भेजा । लेकिन, बौद्धों की दुनिया में रहने और पूरी तरह उनके रंग में पग कर लौटने के बाद उन्होंने पहले लंका पहुंच कर जून 1930 में विद्यालंकर विहार में विधिवत 'प्रव्रज्या' ग्रहण की और बौद्ध भिक्षु की दिनचर्या के साथ अपनाये गये रामोदर सांकृत्यायन नाम को बदल कर 'राहुल सांकृत्यायन' हो गये ।

भारत आये तो अध्ययन–मनन और लेखन से ज्यादा जरूरी उन्हें अंग्रेजों के खिलाफ लड़ना लगा और वे दुबारा स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने लगे । कांग्रेस के सम्मेलनों में शिरकत की । फिर, लंका गये और वहां से यूरोप जाकर बौद्ध धर्म का प्रचार किया । चार माह के इस प्रवास में काशाय वेश धारण कर विचर रहा यह अनोखा भिक्षु मार्क्स के विचारों में रुचि लेने लगा ।

1933 में यूरोप से लंका और वहां से लद्दाख जा पहुंचे । कुछ दिनों के लिए जम गये । 'मज्झिम निकाय' का अनुवाद किया । 'तिब्बत में बौद्ध धर्म', 'तिब्बत प्राइमर', 'तिब्बती पदावलियाँ' और 'तिब्बती व्याकरण' लिखा । इसी बीच 'धम्मपद' का संस्कृत छायानुवाद भी किया ।

1934 में दूसरी बार तिब्बत पहुंचे, एक–एक कर सभी बाधाएं उनके व्यक्तित्व के सामने हटती गयीं । बरसों से बन्द विहारों के कमरे खुलते गये । उनमें जमा पोथियों के अम्बार तलाश कर वे जितना हो सका उतने की नकल और फोटो उतारते रहे । तकरीबन 1500 फीट की ऊंचाई पर सुन्न कर देने वाली शीत में भी उन्होंने प्रतिदिन 500 श्लोक की गति से नकल उतार कर हैरतअंगेज करतब कर दिखाया । कदम और कलम का यह अद्‌भुद तारतम्य, चार माह तक ही नहीं, लगे हाथ उनकी सुनिश्चित जानकारी प्रतिष्ठित शोध–पत्रिकाओं के माध्यम से विद्वत–जनों की नजर में लाने के लिये लिखते जाने में भी दिखता रहा ।

1935 में रंगून, जापान, कोरिया, मंचूरिया और मास्को तक बुद्ध के संदेश पहुंचाते और ज्ञान का भण्डार बढ़ाते हुए, ईरान होकर छः माह के बाद साम्यवाद में रचकर लाहौर पहुंचे । 'सतमी के बच्चे', 'जापान', 'तिब्बत में बौद्ध धर्म ' जैसी रचनाएं सामने आयीं । तिब्बत से लायी कुछ दुर्लभ प्रोथियों का संपादन/ प्रकाशन करते–कराते पैरों की चकरी नाचने लगी । हिमालय के पार बसी उनकी आत्मा फरवरी 1936 में एक बार फिर उन्हें तिब्बती विहारों में खींच ले गयी । अलभ्य पोथियां खोजने, नकल उतारने का सिलसिला आठ माह तक चलता रहा । नवम्बर 1936 में उनकी इस कमाई का तीसरा खेवा भारत पहुंचा। इसे संभालते–रखते सोवियत अकादमी का दूसरा निमंत्रण मिला ।

सितम्बर 1937 में ईरान के रास्ते मास्को, फिर लेनिनग्राद प्राच्य संस्थान पहुंचे और वहां संस्कृत के प्रोफेसर का पद संभाला । यहाँ उन्होंने भारतीय-तिब्बती विभाग की सचिव लोला, जो स्वयं एक भाषाविद् थीं, को भी संस्कृत पढ़ाना शुरू किया । लोला उन्हें रूसी भाषा के पाठ सिखाने लगीं । पढ़ने–पढ़ाने का यह क्रम प्रणय की पेंगों में बदल कर 'वसुधैव कुटुम्बकम' की स्थायी कड़ी बन गया । सितम्बर 1938 में लोला से उनके पुत्र 'इगोर' का जन्म हुआ । लेकिन '**चरक भिक्खवे चारिकं**' की माला डुलाने वाला उसका पिता अब तक पामीर के पठारों पर पहुंच कर कलम – कैमरे से 'नैयायिक ज्ञानश्री ' और 'योगाचार–भूमि ' जैसे दुर्लभ ग्रन्थ संजोने में लग चुका था ।

1939 में भारत लौट कर वे किसान आन्दोलन में कूद पड़े । गिरफ्तार हुए । कुछ महीनों की कैद में 10 दिन और 17 दिन के उपवास

रखे । छूटे । मोतीहारी के किसान आन्दोलन और बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष चुने गये । किसान आन्दोलन के चलते 1940 में फिर पकड़े गये । 29 मास के कारावास में भी इनकी बानगी निराली ही रही। 'दर्शन दिग्दर्शन' जैसा 847 पृष्ठ का ग्रन्थ लिख कर एक-एक दिन खरा-खरा भुनाया ।

कैद से छूटे तो कुछ दिन आस-पास – कनैला, विजयवाड़ा, उत्तराखण्ड जैसी जगहों पर – मंड़रा कर साईबेरिया की ओर उड़ चले और 4 जून 1945 को लेनिनग्राद के पुराने ठीहे पर बसेरा डाला । पत्नी-बच्चे के साथ रह कर दो बरस अध्ययन-अध्यापन करते हुए 'मध्य एशिया के इतिहास' की सामग्री जुटाई । वहां की सरकार ने उन्हें अपना परिवार साथ ले जाने की इजाजत नहीं दी । अकेले हिन्दुस्तान की ओर लौट पड़े।

17 अगस्त, 1947 को बम्बई बन्दरगाह पर उतरना भी एक संयोग रहा। मुल्क की तरह उनकी जिन्दगी की नयी शुरुआत हुई । अपनी तरह से, अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ, नये भारत के निर्माण में जुट गये । इसी साल उन्हें 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का सभापति चुना गया । राहुल बाबा ने काम की उमंग में ऐसी-ऐसी अनहोनी कर दिखायी कि बड़े-बड़े दांतों अंगुली दबाएं, चौदह रोज में 16000 शब्दों का अंग्रेजी-हिन्दी शासन-शब्दकोश और तीन दिन में भारतीय संविधान के हिन्दी रूपान्तर का मसौदा तैयार किया ।

एक-एक मिनट का हिसाब रखने वाले राहुल का कोई साल ऐसा नहीं गया जबकि उन्होंने चारों ओर बिखरी ज्ञान-राशि को दोनों हाथ बटोरा और खुले हाथ बांटा न हो । इसी धुन में 1949 में उन्होंने घुमक्कड़ी को धर्म बनाकर 'घुमक्कड़ शास्त्र' नामक एक ऐसा कालयजी ऊर्जा-स्रोत रच दिया, जिसका स्पर्श मात्र अलौकिक लोक और मुक्ति-मार्ग तक ले जाने में सक्षम है । लेखन के इस अबाध क्रम में अप्रैल 1949 में कलिम्पोंग में सहायिका के रूप में मिलीं 'कमला पेरियार' क्रमशः उनकी प्रेयसी और, 23 दिसम्बर, 1950 को, धर्मपत्नी बन गयीं । 'सूदखोर की मौत', 'कुमाऊँ' और 'मध्य एशिया का इतिहास' आदि एक के बाद एक नयी – नयी रचनाओं का प्रणयन, रूपान्तरण, टीकाकरण चलते रहे ।

1953 में पुत्री जया और 1955 में पुत्र जेता के जन्म के बाद बाबा को माया ठगने लगी । यहीं से उनकी 'करुण कहानी' शुरू होती है । बच्चों की परवरिश और नून तेल लकड़ी की चिन्ता सताने लगी । लेकिन उनके मूल धर्म में कहां परिवर्तन आने लगा । पढ़ना-पढ़ाना, घूमना और लिखना ही इस फिक्र से दो-दो हाथ करने के भी साधन-साध्य बने रहे । इसी बीच 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' से हिन्दी में विश्वकोश प्रकाशन की योजना बनी । इसके प्रधान संपादक का भार ग्रहण करने का प्रस्ताव स्वीकार करके वे तत्सम्बन्धी सामग्री जुटाने में लग गये । उप संपादक आदि के नामों की सूची बना ली । लेकिन 1956 तक प्रतीक्षा करके ऊबने लगे और तब भी यह काम उन्हें नहीं सौंपा गया तो वे क्षुब्ध होकर चीन-तिब्बत जाने की सोचने लगे । इसी साल वे विश्व बौद्ध सम्मेलन में भाग लेने नेपाल गये तो 'आल चाइना बुद्धिस्ट एसोसियेशन' के महामंत्री श्री चाऊ-फू-चू से भेंट होने पर चीन जाने और तिब्बत में अनुसंधान करने की इच्छा व्यक्त की । अक्टूबर 1957 में वाराणसी में मालूम हुआ कि विश्व कोश का काम उन्हें नहीं मिलना है । यह जान कर उन्हें बड़ा दुख हुआ । उनके आत्म-सम्मान पर बहुत चोट लगी । स्वास्थ्य गिर गया और स्वभाव चिड़चिड़ा हो गया । वे भारत से बाहर निकलने की सोचने लगे ।

1958 में श्री चाऊ-फू-चू के प्रयास से, चीन सरकार के निमंत्रण पर, राहुल जी चीन गये । वहां चार माह रहकर उन्होंने बौद्ध धर्म पर भाषण दिये। राजनीतिक उथल-पुथल के कारण तिब्बत जाकर कुछ और खोज करने की उनकी इच्छा पूरी नहीं हो सकी । इससे उनका मन और खिन्न हो गया और पेकिंग में उन्हें गम्भीर रूप से दिल का दौरा पड़ा । एक माह चीन में ही इलाज कराकर उनकी पत्नी उन्हें साथ लिवा लायीं ।

संयोग से पेकिंग में ही उन्हें श्री लंका के विद्यालंकार विश्वविद्यालय का निमंत्रण मिल गया था। अतः आठ माह इलाज और आराम करके 1959 में 66 वर्ष की उम्र में दर्शन के महाचार्य पद को सुशोभित करने श्रीलंका पहुंचे । परिवार भारत में छोड़ दिया । वहां दिन-रात केवल अध्यापन ,मनन और लेखन में लग गये । अनवरत कठोर श्रम और दो जगह की आर्थिक व्यवस्था की चिन्ता आदि से अन्ततः उनका फौलादी तन भी दरकने लगा । स्वास्थ्य दिनोदिन बिगड़ता गया । मधुमेह-प्रमेह दोनों बढ़ आये । किसी तरह गिरते-पड़ते कलकत्ता-दार्जिलिंग पहुंचे । दो माह के इलाज से कुछ ठीक होने पर फिर श्रीलंका चल दिये । तब तक एक पटकनी और लगी, दो ही महीने में भारत आना पड़ा । नवम्बर, 1961 में राहुल जी दार्जिलिंग से कलकत्ता आये । उन्हें मृत्यु का आभास होने लगा था । 8 दिसम्बर को डायरी लिखना छोड़ा और 11 दिसम्बर को स्मृति लोप का आघात हुआ । **"गगन विहारी हारिल जमीन पर तड़फड़ाने लगा"** । भारत और रूस के अच्छे से अच्छे डाक्टर भी उन्हें ठीक न कर सके । अत्यधिक कष्टप्रद कारुणिक स्थिति से गुजरते हुए 14 अप्रैल 1963 को 70 की उमर पार करके अनन्त की यात्रा पर निकल पड़े ।

"सत्तर की उम्र कुछ कम नहीं होती और न तीन सौ (?) से ऊपर पुस्तकों का सृजन एक जीवनकाल के लिए कुछ कम कहा जा सकता है लेकिन तो भी राहुल का देहान्त आकस्मिक और असमय लगता है तो इसीलिए कि उसकी क्रियाशक्ति इस अन्तिम बीमारी के पहले तक बिल्कुल अक्षुण थी और वह अपनी आयु के एक-एक पल से उसका रस निचोड़ने में उसी तरह लगे हुए थे जो कि उनकी खास पहचान थी । जो आदमी कुछ करता-धरता नहीं, बस आलसी की तरह खटिया तोड़ता पड़ा रहता है, उसका मरना

एक बात है और जो आदमी लगातार काम में लगा हुआ है वह कभी भी जाये, कितना भी बूढ़ा हो जाये, मन उसके जाने को जैसे स्वीकार नहीं कर पाता, यही लगता है कि ऐसी क्या जल्दी थी, अभी और कुछ बरस रह जाते ।" [22]

III

"काम का उनका दिन सोलह घंटे से कम नहीं होता, अठारह घंटे भले ही हो जाये । कड़ा से कड़ा बुखार हो तो भी, अनशन से क्लान्त शरीर हो तो भी ।" [13]

"अविश्रान्त भाव से काम करते रहते । उनके साथ बहुत कम सहयोगी काम कर पाते थे । एक ही साथ दो-दो तीन-तीन सहयोगियों से वह काम लेते थे । अधिक से अधिक चार-छः महीना काम कर लेना उनके किसी भी सहायक के लिये बहुत प्रशंसनीय था।" [10]

" जिन्होंने राहुल को बरसों-बरसों रोज़ नियमपूर्वक अठारह और बीस घंटे काम करते देखा है, वह जानते हैं कि राहुल ने अपने शरीर के साथ कैसा अत्याचार किया है । आराम का ख्याल नहीं, बीमारी का लिहाज़ नहीं, जोता है घोड़े की तरह, चाबुक मार-मार कर ! और अन्त तक यही उनका ढंग रहा।"

"कहीं जाना नहीं, आना नहीं, घूमने तक की फुर्सत नहीं और थोड़ा-बहुत जो कुछ घूमना होता वहीं अपने कमरे में घूम लेते-खुद को जैसे काल कोठरी की सजा दे रखी हो । शरीर थक चुका था, जवाब देने लगा था ।" [22]

" उस वय (67 साल) में भी राहुल जी की कार्य क्षमता देख कर हमें आश्चर्य होता था । - - - - - - रात को 2 बजे से पहले न सोते । अपने रहने के दोनों कमरों को उन्होंने काल-कोठरी का रूप दे रखा था। रात को मच्छर तथा कीड़े-मकोड़े भीतर न जाएं, इसलिए सभी झरोखे कांच से बंद करवा डाले थे तथा संध्या होते ही उनका सेवक आ कर शीशेदार खिड़कियां बन्द कर जाता था ।" [27]

इतने कड़े परिश्रम ने उनके जीवन को छोटा करने में बड़ा भारी हाथ बंटाया लेकिन धुंआ देते हुए चिरकाल तक सुलगते रहने की अपेक्षा क्षणमात्र के लिये प्रज्वलित होना श्रेयस्कर - **क्षणं प्रज्वलितं श्रेयः, न च धूमायते चिरात्** - समझने वाले राहुल भला कहां मानने वाले थे। इसी मन्त्र के बल पर उन्होंने एक व्यापक रचना-संसार का सृजन किया, जिसकी सूची परिशिष्ट 2 पर अवलोकनीय है । यहां उसके उल्लेखनीय पक्षों की चर्चा समीचीन होगी ।

राहुल बाबा किसी मठ या 'कूप-संस्थान' के उन महाचार्यों में से नहीं थे जो गांवों से मातृभाषा में शिक्षा लेकर उन्ने आसनों तक पहुंचने के बाद अपनी भाषा में लिखने में हीनता महसूस करते हैं और प्रायः यह बहाना करते देखे जाते हैं कि अपनी भाषा में उनकी कलम नहीं चलती । इसके विपरीत दर्जनों भाषाएं सीख कर भी राहुल जी ने अपनी भाषा को वरीयता दे कर उसकी शोध-साहित्य प्रस्तुत करने की क्षमता का परिचय कराया। उनका दृढ़ विश्वास था कि ज्ञान का प्रवाह आम आदमी की ओर उन्मुख होना चाहिए और यह केवल उनकी अपनी भाषा के माध्यम से ही संभव है । इस सोच को उन्होंने उस जमाने में अमली जामा पहनाया जबकि अंग्रेजी राज में सूरज नहीं डूबता था और चारों ओर अंग्रेजों का बोलबाला था । एक बार उन्ने आसनों से उतरकर यदि कुछ दिन जनता के बीच विचरते हुए दुनिया देखी जाये तो आसानी से समझा जा सकता है कि पूर्व उपनिवेशों के अलावा, अन्य इलाकों का आकार कितना ही छोटा और आबादी कम हो, वहाँ के लोगों में अपनी भाषा के प्रति गौरव का भाव कितना प्यारा और पक्का है ।

बाबा ने इस भ्रम को भी बखूबी धराशायी कर दिखाया कि हिन्दी में लिखने पर मान्यता नहीं मिलती । 'वोल्गा से गंगा' और 'मध्य एशिया का इतिहास' इसके जीते-जागते गवाह हैं । इनका अनुवाद भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी में ही नहीं अन्य विदेशी भाषाओं में भी किया गया। यदि लेखन उत्कृष्ट और शोध परक हो तो प्रायः दूसरे देश वाले भी उसके क़द्रदान होते हैं ।

लोक साहित्य के संग्रह में उन्होंने विशेष रुचि दिखलायी । हिन्दी एवं उसकी बोलियों को साहित्यिक स्वायत्तता दिलाने तथा उन्हें शिक्षा का माध्यम बनाने पर पूरा बल दिया । हिन्दी के प्रश्न पर कम्युनिस्ट पार्टी से निष्कासित होना पड़ा, परन्तु समझौता स्वीकार नहीं किया । 'शासन शब्द-कोष' और 'प्रशासनिक टर्मिनोलॉजी' तैयार की । 'तिब्बती-संस्कृत शब्द कोष' प्रकाशित कराया ।

हिन्दी को उनकी सर्व उल्लेखनीय देन है तिब्बत के 'ङोर' विहार से 750 ई० के सरहपा के दोहाकोश की प्रति खोज निकालना । वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सिद्ध आचार्यों के प्राचीन अपभ्रंश साहित्य की ओर ध्यान दिलाया और इस प्रकार हिन्दी साहित्य के उद्भव का समय तत्कालीन मान्य काल से 400 वर्ष पीछे चला गया । उन्होंने सरहपा के दोहों के तिब्बती पाठ को मूल अपभ्रंश में सम्पादित करके तिब्बती और हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित कराया ।

दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा' भी बहुत काम की किताब है । इसमें उन्होंने बताया है कि 'रेख्ता' या 'उर्दू' प्राचीन हिन्दी की ही एक शैली है, जिसे वली उल्लाह, मोहम्मद कुली और कुतुब शाही आदि ने अपने लेखन से सम्पन्न बनाया । उपन्यासों में 'सिंह-सेनापति', 'जय यौधेय' और 'मधुरस्वप्न', अंग्रेजी से हिन्दी में रूपान्तरित 'विस्मृति के गर्भ में', 'जादू का मुल्क' और 'दाखुदा', तथा 'सरदार पृथ्वी सिंह' की जीवनी आदि रचनाएं भी खासी पढ़ी जाती हैं ।

बौद्ध धर्म से सम्बन्धित साहित्य में 'मज्झिम निकाय', 'दीर्घ निकाय', 'विनय पिटक', 'धम्म पद' का हिन्दी अनुवाद तथा 'बुद्ध चर्या' सर्व प्रमुख हैं । तिब्बत में बौद्ध धर्म के उद्भव और विकास तथा भारतीय बौद्ध विद्वानों के योगदान के विषय में 'तिब्बत में बौद्ध धर्म' नामक पुस्तक में विस्तृत एवं गम्भीर जानकारी उपलब्ध करायी है । बौद्ध धर्म से सम्बन्धित विषयों पर इनके अतिरिक्त भी कई रचनाएं लिख कर अपना योगदान किया है ।

उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि तिब्बत की चार साहसिक यात्राओं में 'शलू', 'न्गोर', 'गु-रुन-ल्हा' आदि बौद्ध विहारों से संस्कृत बौद्ध साहित्य की दुर्लभ पुरापोथियों को प्रकाश में लाना मानी जाती है । इनका विवरण 'जर्नल आफ दि बिहार एण्ड ओड़िसा रिसर्च सोसाइटी' में प्रकाशित हुआ है (परिशिष्ट 3) । राहुल जी अपनी इन यात्राओं में खरीद कर, भेंट में, नकल उतार कर और फोटो खींच कर जो सामग्री खच्चरों पर लाद कर भारत लाये हैं उसमें 'कंजूर' और 'तंजूर' के संग्रह तथा अनेक ऐसे ग्रन्थ सम्मिलित हैं जो भारत में कई शताब्दियों पूर्व लुप्त हो चुके थे । इनमें से किसी एक ग्रन्थ की खोज किसी भी अन्वेषक को अक्षय ख्याति दिलाने के लिये बहुत काफी है ।

इन ग्रन्थों पर पाश्चात्य विद्वानों विशेषकर रूस के श्चेर्बात्स्की और इटली के तूची अर्से से नजरी लगाये थे । यूरोप के संग्रहालय इनकी मनमांगी कीमत दे सकते थे । इनके भारत पहुंचने की सूचना पा कर पाश्चात्य शोध-कर्ताओं यथा- ओतो, रूदोल्फ, सिल्व्यां लेवी आदि ने समुद्री तार से बधाइयां भेजीं । श्चेर्बात्स्की ने उन्हें रूस आने का निमंत्रण भेजा और काशी प्रसाद जायसवाल को पत्र लिख कर इस सामग्री की खोज को रेखांकित करने और इनके महत्व की चर्चा के लिए अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स के आयोजन हेतु अनुशंसा की । उन्होंने यह भी लिखा कि –

> **" राहुल जी ने धर्मकीर्ति के ग्रन्थों का पता लगाकर उन्हें प्राप्त करने का जो आश्चर्यजनक कार्य किया उसका समाचार पढ़ कर हम लोगों को अत्यन्त हर्ष हुआ । धर्मकीर्ति भारत वर्ष के कान्ट थे । अब तक हमें उनके ग्रन्थों के अनुवाद चीनी और तिब्बती में पढ़ने पड़ते थे, पर अब तो मूल ग्रन्थ ही मिल गया है । मैं और मेरे सहायक डाक्टर वस्त्रीकोव भारत पहुंचकर उन ग्रन्थों को देखना चाहते हैं ।"** [15]

इतनी दुर्लभ सामग्री की खोज और उस से मिली ख्याति के बाद ऐसा नहीं कि राहुल जी बैठ गये हों । एक उत्कृष्ट शोधकर्ता की तरह उन्होंने शांत रक्षित के 'वाद न्यायः', धर्मकीर्ति के 'प्रमाण वार्त्तिकम्', – मातृचेट के 'अध्यर्ध शतक', नागार्जुन की 'विग्रह व्यावर्तिनी', मनोरथ नन्दी कृत 'प्रमाणवार्तिक वृत्ति', प्रज्ञाकर गुप्त कृत 'प्रमाणवार्तिक भाष्य', और सरहपा के 'दोहा कोश' का सम्पादन किया, वसुबन्धु की 'विज्ञप्ति मातृता सिद्धि' का अनुवाद किया और 'अभिधर्म कोश', 'हेतु बिन्दु' तथा 'सम्बन्ध परीक्षा' और 'प्रमाणवार्तिक' की टीकाएं भी लिखीं । प्रो० सिल्वयां लेवी ने उनके इस कार्य के विषय में इस प्रकार लिखा है –

> **" मुझे सन्देह है कि बहुत दिनों से कम से कम एक शताब्दी से, नेपाल के पण्डित अमृतानन्द के जमाने से कोई भी बौद्ध विद्वान ऐसी सुन्दर भाषा नहीं लिख सका था । वह भाषा जिसे अश्वघोष, नागार्जुन और वसुबन्धु ने ऐसे अधिकारपूर्ण ढंग से व्यवहार किया था । आपका अभिधर्मकोश आपकी संस्कृत योग्यता का एक प्रमाण देता है । आपकी भूमिका, आपका विशाल अध्ययन और आपकी बहु भाषा विद्वता सूचित करती हैं ।"** [15]

> **" खास तौर से मुझे खुशी होगी भिक्षु राहुल सांकृत्यायन के साथ काम करने में, क्योंकि मैं उनकी गणना बौद्ध धर्म के वर्तमान सर्वश्रेष्ठ विद्वानों में करता हूं और उन्हें बौद्ध आदर्शों का एक प्रतिनिधि मानता हूं ।"** [15]

दर्शन शास्त्र पर लिखे गये ग्रन्थों में प्राचीन और अर्वाचीन भारतीय एवं विदेशी दार्शनिक-विचारधाराओं का परिचय देते हुए उनपर समीक्षा प्रस्तुत करने वाला, 'दर्शन-दिग्दर्शन' नामक ग्रन्थ बड़ा स्तरीय माना जाता है । हिन्दी में यह अपनी तरह का पहला प्रयत्न है । इसमें इस्लामी, यूरोपीय और यूनानी विचार- धाराओं पर विचार किया गया है। इसके अन्त में भारतीय और विदेशी दार्शनिकों का एक तुलनात्मक चार्ट भी दिया गया है।

इतिहास और पुरातत्व राहुल जी के सर्वप्रिय विषय रहे हैं । इनकी धुरी पर उनके चिन्तन, मनन और लेखन का चक्र घूमता रहा है । उन्होंने इतिहास की सबसे ठोस सामग्री पुरातात्विक साक्ष्यों को माना है । अपनी रचनाओं के प्रणयन में उन्होंने इनका ज़मकर प्रयोग किया है। उनकी कहानियों, उपन्यास, इतिहास आदि रचनाओं में जगह-जगह इनके दर्शन होते चलते हैं । यात्रा-विवरणों में तो ऐसी सामग्री का लेखा-जोखा हर ठहराव पर मिलता है । राहुल जी में इनके उपयोग की अद्भुद क्षमता और विषय में गहरी पैठ दिखती है । मंदिर-मूर्ति, सिक्के, साहित्य, जन-जीवन, परम्पराओं, पुराने बर्तन, चित्रों,

वास्तु, महाश्म और अभिलेखों–पाण्डुलिपियों आदि के अलग–अलग विशेषज्ञ मिलकर भी कभी –कभी जैसा अध्ययन करते हैं, राहुल जी ने अकेले ही उनके समतुल्य और कहीं–कहीं उनसे बढ़कर कार्य किये हैं। पोथियाँ और अभिलेखों को पढ़ने, पाठान्तरण, रूपान्तरण और व्याख्या–टीका करने की उनमें आश्चर्यजनक गति थी । इस विषय के विद्वानों ने भी उनकी इस सिद्धहस्तता की प्रशंसा की है ।

'पुरातत्व निबन्धावली' और 'गंगा' का पुरातत्व अंक इस विषय में उनकी गहरी अभिरुचि के पक्के दस्तावेज हैं । उन्होंने इस विधा में विद्वानों के साथ सामान्यजनों की भागीदारी पर भी विशेष रूप से बल दिया है । इनके परीक्षण–परिरक्षण में उनके योगदान की उपादेयता को उन्होंने बड़े सरल और प्रभावशाली ढंग से बताया है । वस्तुतः भारत में पुरातात्विक सामग्री इतने स्थानों पर, इतने रूपों में, मिलती है कि केवल अधिकारी–विद्वानों के बलबूते पर ही इनका अवगाहन और सार–संभाल कर लेना संभव नहीं है । राहुल जी इसके लिए सीधे आम आदमी का आवाहन करते हैं :–

> **" यह ख्याल रखें कि, पुरातत्वविद् न सर्वज्ञ हैं और न वह भारत में सब जगह पहुंच ही सके हैं, इसीलिए आपके गांव के डीह या महादेव स्थान पर ढेर की हुई खण्डित मूर्तियों के टुकड़ों में भी कभी कोई हीरा निकल आ सकता है ।"**
>
> **" (क) मिट्टी से भठे तथा दब गये भीटों वाले जहां तालाब हों, (ख) जहां आस–पास पुराने देवस्थानों या पीपल के वृक्षों के नीचे टूटी–फूटी मूर्तियां अधिक मिलती हों, (ग) जहां खेत जोतते या मिट्टी खोदते वक्त पुराने कुंए या ईंटों की दीवारें आदि निकल आती हों, (घ) जहां बरसात में मिट्टी के घुल जाने पर तांबे आदि के पैसे तथा दूसरी चीजें मिलती हों (चौकोर और मूर्ति वाले सिक्के अधिक पुराने होते हैं, और पाने वाले को, उनका कई गुना अधिक दाम मिल सकते है), ऐसे स्थान पुरातत्व के लिए अधिक उपयोगी होते हैं ।"**
>
> **" गांव में, साधारण लोगों में, यह भ्रम फैला हुआ है कि, सरकार जहां–कहीं खुदाई करती है, वह किसी खजाने के लिए । उन्हें समझना चाहिए कि, पुरातत्व की खुदाई में सरकार ने जितना खर्च किया है, यदि खुदाई में निकले हुए सोने–चांदी के दाम से मुकाबिला किया जाये, तो उसका शतांश भी न होगा। फिर भी सोने–चांदी या कीमती पत्थर की जो कोई चीज मिलती है, उसे न गलाया जाता है, न बेचा जाता है । वह तो भिन्न–भिन्न संग्रहालयों में, इतिहास के विद्वानों और प्रेमियों के देखने और जानने के लिए, रख दी जाती हैं । यदि गांव में इस तरह के सिक्के आदि किसी को मिलें तो उसे वह गला कर या तोड़–फोड़ करके खराब न कर दें । सम्भव है कि उससे उसकी अपनी जाति का कोई सुन्दर इतिहास मालूम किया जा सके । बहुत से भूले वंशों के परिचय और गौरव स्थापन करने में इन चीजों ने बहुत सहायता की है । सम्भव है, ऐसी चीज को गलाने या तोड़ने वाला अपने पूर्व पुरुषों की कीर्ति और इतिहास को अपनी इस क्रिया द्वारा गला और तोड़ रहा हो।"[32 (V)]**

इतने सरल लफ्जों और इतने साफ तरीके से पुरातत्व में जनता की भागीदारी की बात उनके अलावा कोई और नहीं कर सका है । इस निबन्धावली में नक्शों और सन्दर्भों के साथ 'श्रावस्ती,' 'जेतवन' और 'विक्रमशिला', 'जथरिया' और 'थारू' लोगों, 'वज्रयान और चौरासी सिद्ध' और 'तिब्बत में चित्र कला' आदि विषयों पर शोध–परक और सूचनाप्रद लेख सम्मिलित हैं । इनमें प्रस्तुत सामग्री और रेखा–चित्र विषय को सहज और सुबोध बनाने के लिए बड़े जतन से संयोजित किये गये हैं।

'गंगा' के 'पुरातत्व अंक' के प्रकाशन से तत्कालीन हिन्दी जगत में सनसनी फैल गयी । इस भाषा में इसके पूर्व ऐसा प्रयोग नहीं हुआ था । इसको मुखयतः राहुल जी ने ही अपने शोध–परिणामों से उपयोगी बनाया था । यद्यपि अब तक पुरातत्व विषय में बहुत सी नयी–नयी खोजें हो चुकी हैं, फिर भी, इसकी उपयोगिता आज तक बनी हुई है । वासुदेव शरण अग्रवाल, भगवत शरण उपाध्याय आदि विद्वतजनों ने मुक्त कंठ से इसका महत्व स्वीकार किया है ।

रूस यात्राओं के दौरान राहुल जी ने करीबन 2400 पृष्ठ की जो सामग्री जुटाई थी, उसके आधार पर उन्होंने दो भागों में 'मध्य एशिया का इतिहास' नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया । अन्वेषण और शोध की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट रचना मानी जाती है । इसमें सम्मिलित सामग्री इसके पहले कभी एक जगह जुटाकर प्रकाशित नहीं करायी गयी थी । इस क्षेत्र का बहुत सा अध्ययन रूसी भाषा में उपलब्ध था और उससे सम्बन्धित स्थल सोवियत क्षेत्र में स्थित थे । इस क्षेत्र में जाना और मूल रूसी भाषा को समझना, दोनों ही, रूस में हुए शोध–कार्यों का लाभ लेने के रास्ते में दुष्कर व्यवधान थे । लेकिन राहुल के लिए इन्हें पार कर जाना बड़ा सहज था, उन्होंने तोल्सताफ आदि रूसी अन्वेषकों और उत्खननकर्त्ताओं की रिपोर्टों तथा अंग्रेजी और अन्य भाषाओं में उपलब्ध सामग्री का भरपूर उपयोग करके इस ग्रन्थ में भारतीय बौद्ध विद्वानों और भिक्षुओं द्वारा मध्य एशिया में प्रसारित सन्देश और वहां के जनजीवन, साहित्य और कला आदि पर पड़े प्रभाव का विस्तृत विवरण दिया है । इसके पूर्व ऐसा ग्रन्थ किसी भी भाषा में नहीं लिखा गया था । इसकी उपयोगिता का अन्दाजा इसी से लगाया जा सकता है कि इसे पढ़ने के लिए पाश्चात्य विद्वानों ने हिन्दी पढ़ी और इसका अनुवाद अंग्रेजी के अतिरिक्त कई

विदेशी भाषाओं में किया गया । इस ग्रन्थ के लिये सामग्री जुटाने के साथ ही उन्होंने 400 पृष्ठों में एक 'रूसी–संस्कृत शब्दकोश' का प्रणयन किया था । यह कोश अभी तक अप्रकाशित है, किन्तु इसे पुरातात्विक शब्दों पर रूसी और संस्कृत भाषाओं में की गयी टीकाओं से युक्त एक अनूठा शब्द–कोश बताया जाता है ।

वोल्गा से गंगा (कहानी संग्रह), सिंह सेनापति और जय यौधेय (उपन्यास) आदि शुद्ध रूप से पुरातत्व की पृष्ठभूमि में लिखी गयी ऐसी रचनाएं हैं कि इन्हें पढ़ने वाले बिना किसी यत्न के सहज की एक खास क्षेत्र के युग विशेष की जीवंत झांकियां देखते चलते हैं । 'साम्यवाद ही क्यों' का पहला अध्याय भी मुख्यतः पुरातात्विक खोजों के आधार पर लिखा गया है ।

पुरातत्व–इतिहास लेखन में उनकी अति तीव्र गति का अनुमान इस दृष्टांत से लगाया जा सकता है कि -

> **" एक बार जब उन्हें आजमगढ़ जिला गजेटियर समिति की ओर से उक्त जिले का इतिहास तैयार करने का काम सौंपा गया, तो उन्होंने सिर्फ 6 दिन में समूचे जिले का दौरा कर, न सिर्फ उसका प्रारंभिक इतिहास ही तैयार कर दिया, वरन् विभिन्न गांवों से करीब 58 मूर्तियां एकत्रित कर उनके पुरातात्विक परिचय के साथ उन्हें वहां के 'हरिऔध कला भवन संग्रहालय' को भेंट कर आये । "**[5]

राहुल जी ने हजारीबाग जेल में जिन चार किताबों का अंग्रेजी से हिन्दी में रूपान्तरण किया था – 'शैतान की आंखें', 'विस्मृति के गर्भ में', 'जादू का मुल्क' और 'सोने की ढाल' – उनकी पृष्ठभूमि में मिस्र और अफ्रीका आदि का पुरातत्व ही है । जासूसी उपन्यासों की तरह रोचक इन उपन्यासों में पाठक क्रमशः मिस्र और अफ्रीका आदि की पूर्व संस्कृतियों का रसास्वादन करता है ।

उन्होंने एक–एक कर कई धर्म धारण किये और आंक–तौल कर त्याज दिये । एक धर्म ऐसा भी रहा जो उन्हें जीवन भर धारे रहा और जिसने दुनिया दिखा कर केदार को राहुल बनाया । जब इस 'सत्य' को उन्होंने पहचाना तो औरों के भले के लिए इसका दर्शन 'घुमक्कड़ शास्त्र' में उतार कर प्रस्तुत किया । उनकी सारी उपलब्धियों का मूलाधार यही धर्म है, जिसकी बदौलत वे वह सब कर सके जिनका जिक्र ऊपर किया गया है । मेरी समझ से उनकी सबसे बड़ी देन तथा सर्वश्रेष्ठ और सर्वजन हिताय रचना यह 'शास्त्र' ही है । यह घर–घर में संजो कर रखने की चीज है । घुमक्कड़ी और घुमक्कड़ की महिमा का बखान करते हुए इसके पहले अध्याय में इस तरह जिज्ञासा जगायी गयी है –

" घुमक्कड़ से बढ़ कर व्यक्ति और समाज का कोई हितकारी नहीं हो सकता । कहा जाता है, ब्रह्मा ने सृष्टि को पैदा, धारण और नाश करने का जिम्मा अपने ऊपर लिया है । पैदा करना और नाश करना दूर की बातें हैं, उनकी यथार्थता सिद्ध करने के लिये न प्रत्यक्ष प्रमाण सहायक हो सकता है, न अनुमान ही। हां दुनिया के धारण की बात तो निश्चय ही न ब्रह्मा के ऊपर है, न विष्णु के और न शंकर ही के ऊपर। दुनिया दुःख में हो चाहे सुख में – सभी समय यदि सहारा पाती है तो घुमक्कड़ों की ही ओर से ।"

" घुमक्कड़ क्यों दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विभूति है? इसी लिये कि उसी ने दुनिया को बनाया है । यदि आदिम पुरुष एक जगह नदी या तालाब के किनारे गर्म मुल्क में पड़े रहते, तो वह दुनिया को आगे नहीं ले जा सकते थे ।"

" अमेरिका अधिकतर निर्जन सा पड़ा था एशिया के कूप-मंडूकों को घुमक्कड़ धर्म की महिमा भूल गयी इसलिये उन्होंने अमेरिका पर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारत को सभ्यता का बड़ा गर्व है, लेकिन इतनी अकल नहीं आयी कि जाकर वहां अपना झंडा गाड़ आते । आज अपने 40–50 करोड़ की जनसंख्या के भार से भारत और चीन की भूमि दबी जा रही है, और आस्ट्रेलिया में एक करोड़ आदमी नहीं हैं । आज एशिया वासियों के लिए आस्ट्रेलिया का द्वार बन्द है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथ की चीज थी । क्यों भारत और चीन आस्ट्रेलिया की अपार सम्पत्ति और अमित भूमि से वंचित रह गये? इसलिए कि वह घुमक्कड़ धर्म से विमुख थे, उसे भूल चुके थे ।"

" घुमक्कड़ धर्म से बढ़कर दुनिया में धर्म नहीं है। धर्म भी छोटी बात है, उसे घुमक्कड़ के साथ लगाना 'महिमा घटी समुद्र की रावण बसा पड़ोस' वाली बात होगी । घुमक्कड़ होना मनुष्य के लिए परम् सौभाग्य की बात है । यह पन्थ अपने अनुयायी को मरने के बाद किसी काल्पनिक स्वर्ग का प्रलोभन नहीं देता, इसके लिए तो कह सकते हैं – क्या खूब सौदा नकद है, इस हाथ दे उस हाथ ले ।"[32(VII)]

इस शास्त्र के मर्म का मतलब भर घोल मिलाकर शिक्षा और समाज में क्रान्तिकारी बदलाव लाये जा सकते हैं । कम से कम आठवें दर्जे से आगे की पढ़ाई के लिये घुमक्कड़ी को अनिवार्य विषय बना दिया जाये तो औपचारिक पढ़ाई खत्म करते–करते सभी छात्र चारों कोने अपना देश, वन–पर्वत, मरु–मैदान, सरित–सागर विस्तार, जगह–जगह के लोग, उनके रीति–रिवाज, रहन–सहन को अपनी आंखों से देख–परख कर पक्के हिन्दुस्तानी और बेहतर आदमी बन सकेंगे । इस प्रक्रिया का अनिवार्य प्रतिफल अच्छा समाज है ।

यह शास्त्र सबके लिये त्रिवेणी स्नान की तरह तारक है । जाति–पांति, धर्म–सम्प्रदाय, क्षेत्रीयता जैसी कितनी ही संकीर्णताओं से घुमक्कड़ पंथ का बुनियादी वैर है । उदारता, मानवता, विश्व बन्धुत्व, एकीकरण और सर्वे–भवन्तु सुखिनः इसके मेरु-दण्ड की कड़ियां हैं । ज्ञान–विज्ञान के द्वार खोलने और सभी तरह के पाखंडों और पोंगापन का खण्डन करने वाले इस धर्म में आज की बहुत सी लाइलाज समस्याओं का इलाज छुपा है ।

राहुल के घुमक्कड़ पंथ को बहुत गम्भीरता से लिया जाना चाहिये। इसका आशय सतही सैर-सपाटे, पिकनिक या मौज-मस्ती से नहीं है । दुनिया के बड़े-बड़े धर्म–प्रवर्तक और अनुसंधानी, यथा – गार्गी, बुद्ध, महावीर, ईसा, शंकराचार्य, चैतन्य प्रभु, गुरु नानक, डार्विन, दयानन्द – आदि इस पंथ के श्रेष्ठ अनुयायी बताये गये हैं । इनकी राह चल कर जीवन सफल बनाने और पर हितकारी होने में किसे सन्देह हो सकता है ? मतलब साफ है, घर में खाट तोड़ते हुए मेज पर ही काम करके 'कोल्हू का बैल' तो बना जा सकता है, अनुसंधान और सर्वजनहिताय उपाय निकालना इस मार्ग के बिना संभव नहीं है । श्रेष्ठ घुमक्कड़ बनने की क्षमता नहीं हो, तो भी इसके अभाव में कहां गुजारा है ? खनिज, वनस्पतियां या पुरानी जगहें खोजनी हों, जनभावना टटोलनी हो या सत्य का प्रयोग करें, सबके लिये 'एक्सप्लोरेशन' सर्वेक्षण, पद–यात्रा, परिव्रजन,जो भी नाम दे लें, उन्नति की ओर ले जाने का यह अकेला रास्ता है । इसलिये सभी को इस पंथ पर निर्द्वन्द भाव से चलना चाहिए।

IV

विश्वास नहीं होता, एक आदमी इतना कुछ कर सकता है । निपट गांव से मिडिल पास करके घर से निकला किशोर प्रायः अनौपचारिक शिक्षा के बल पर क्रमशः अपनी संभावनाओं को इतना विकसित कर ले कि दो–दो विदेशी विश्वविद्यालयों में अलग–अलग विषयों का अध्यापन करे और डी० लिट् की मानद उपाधियों से सम्मानित किया जाये । अपने मुल्क के कोने–अतरे ही नहीं, बीसों देशों का 'दर्शन' करते हुए वहां के लोगों से उनकी बानी में बतियाए । निरन्तर चलते रह कर लिखने पढ़ने का इतना समय निकाल ले कि करीब 50,000 पृष्ठ छपने के बाद भी कुछ मसौदे बचे रह जायें । इतना स्तरीय लिखे कि दूसरे देश के विद्वान साथ काम करने की ख्वाहिश करें । पांच धर्म धारण और बाकी की छान–बीन कर उनका नाव की तरह इस्तेमाल करे । जरूरत पड़ने पर सब कुछ किनारे रख कर परदेशी और देशी जुल्म के ख़िलाफ लड़े, घायल हो, महात्मा गांधी और राजेन्द्र बाबू जैसे नेताओं के साथ भाषण दे, एक–दो नहीं पूरे पांच साल जेल काटे और राजनीतिक ओहदे विकास के पड़ाव बना ले ।

बृहत्तर भारत के कोने–कोने, तिब्बत–चीन–जापान, कोरिया – मंचूरिया और सोवियत के आरम्पार, बाकू की ज्वालामाई, फारस और पीसा की मीनार देखने वाले इस स्वामी के सामने बड़े–बड़े घुमक्कड़ बौने लगते हैं । हवेन्तसांग, फाहयान, स्काट, कोलम्बस और मार्कोपोलो, एक से एक साहसी अन्वेषक हुए हैं, लेकिन उनकी तरह 40 साल विचरने वाला बिरला ही मिलेगा । ये यात्री अगर राहुल की तरह व्याकरण, वेदान्त– दर्शन पढ़ने बैठते तो जाहिरन ड्योढ़ी लांघने के लाले लग जाते ।

जाने–माने विद्वानों में भी किसी–किसी ने एक से ज्यादा विषयों पर, इतना विशद और इतना अच्छा लिखा होगा । यदि उन्हें दुर्गम दर्रे पार करके पामीर के पठार की हाड़–तोड़ शीत में पोथियां पढ़कर 500 श्लोक प्रतिदिन की रफ्तार से श्लोक नकल करने पड़ते तो रास्ते में उनके दम तोड़ देने और व्याकरण-श्लोक भूल जाने का खासा भय रहता । हो सकता है कोई–कोई यह सब भी साध लेते तो तिब्बती, चीनी, रूसी, बर्मी, फ्रांसीसी, पालि, प्राकृत आदि भाषाओं और ब्राह्मी, कुटिला, शारदा, नेवारी, रंजन व वर्तुल लिपियों से पार पाना क्या संभव होता ? व्याकरण, साहित्य, धर्म–दर्शन, इतिहास–पुरातत्व आदि विषयों के अलग–अलग विशेषज्ञ बहुतेरे मिल जायेंगे लेकिन एक ही व्यक्ति में इन सबका उत्कृष्ट समन्वय कहां मिलता है ? इतना ही नहीं वह व्यक्ति सहज विमोहिनी बलिष्ठ काया, मृदु स्वभाव और बुद्ध के समान तेज व प्रभाव रखने वाला भी हो ? ऐसे विलक्षण संयोग तो राहुल, केवल राहुल, में ही दिखते हैं ।

> **"जो काम अक्सर अनुदानों के बल पर बड़े–बड़े प्रतिष्ठान, शोधकर्मियों के दल–बल के साथ, नहीं कर पाते वह उस अकेले जिज्ञासु ने कर दिखाया ।"** [29(ii)]

> **" राहुल एक व्यक्ति नहीं है, जिस साधारण अर्थ में हम इस शब्द को ग्रहण करते हैं, वह एक में अनेक व्यक्ति हैं, और अनेक में एक–उनकी कर्मठता या क्रियाशीलता अनेक व्यक्तियों की समन्वित कर्मठता या क्रियाशीलता है ।"** [22]

> **" ईश्वर जैसे नाना रूपों में आस्ति–नास्ति का खेल खेलता है, ऐसे ही राहुल जी के गुण इतने विरोधी थे कि मानव की विचित्रता मुखर हो उठती थी । भदन्त**

आनन्द कौसल्यायन जब उनकी चर्चा करने लगते तो जैसे कोई वीतरागी योगी अंतर में उतर आता । बंधुवर नागार्जुन उनके जिस रूप का वर्णन करते वह उस ऐश्वर्यशाली राजा का होता था जो शापग्रस्त होकर फिर से पृथ्वी पर आ गया हो । तीसरे बंधु उनके स्नेह और विनय की चर्चा इस प्रकार करते थे कि मैत्रेय की प्रतिमा साकार हो उठती थी । '[15]

ऐसे लोग पृथ्वी पर एक बार ही आते हैं । अपने विलक्षण और चमत्कारिक कृत्यों से सबको चकित, आलोकित करके, आगे का रास्ता दिखाते हुए चले जाते हैं । ऐसे ही लोगों के लिये कहा जाता है – उन्हें भगवान ने अपने हाथों से, फुरसत की घड़ी में बड़े जतन से गढ़ा होगा। उनके लिये कालिदास की यह उक्ति बहुत सटीक बैठायी गयी है [10] –

'तं वेधा विदधे नूनं महाभूत समाधिना ।'

(विधाता ने उन्हें महाभूतों के अद्भुद समन्वय से रचा था ।)

उन्हें स्मरण करते हुए हम उनका शतशः अभिनन्दन करते हैं ।

राकेश तिवारी

उ०प्र० राज्य पुरातत्व संगठन

RĀHULA SĀNKṚITYĀYANA

The year 1993 is the centenary year of a vagabond wanderer, who has aptly been likened to a 'carvan' which passes through new destinations and new lands, every day assimilating varied experiences. Perhaps only due to this reason, he has narrated the account of his own life long journey in the form of a travelogue.

Though this born gipsy has set off for globe trotting in a lighter vagrant vein but the more carelessly he tried to scan the world, the more he dug deep into the realities of the universe. But no enigma of the world could restrain him, he kept on unfolding his personality on the principle of 'one who digs the deepest gets the best.' His prodigious curiosity and 'faquir' like character exhorted him to traverse lands after lands; to travel in time and space simultaneously. Travelling became his religion, so much so, that he founded a 'wandering cult' and he even wrote a cult classic on wandering to give his cult a classical base and sanctity. This is one aspect of his personality, and if all the facets of his personality are interwoven, it would make an uncomparable character known as *Rahula Sānkṛityā-yana* all over the world.

Memoirs of the persons who came in contact with him are engrained with his enchanting image. This six footer wanderer, possessing bewitching physical constitution with broad fore head, vast chest and strong shoulders has been likened to native *Aryans* and *kaddavar Pathans.* His smiling and radiant face always illuminated with a halo, like Buddha and Swami Vivekananda. He was full of human milk. His nature bore child like innocence and naivity. His behaviour was always very simple, decent, courteous, desciplined and balanced.

> "But at the time I least suspected that the man will blossom into this Rāhula Sānkṛityāyana as I know him today - a man resembling the Buddha, a man absolutely free from hostility to any living man, universal in his outlook, absolutely calm, to whom children run up instinctively, to whom man would respond as to Christ or Gautam if he said "follow me."8

He was also known as Rāhula, Rāhula ji, Rāhula Bābā, Mahapandita, Ghumakkar Raj, Pandit ji and Ramodar Sadhu. None of the above names was given by his parents, but were appended to him at various turns of his journey of life. It is only due to this unique character that a remote sleeping village, Pandaha, of distt. Azamgarh of U.P. is being discussed today far and wide. Being paternal village of Rāhula ji, Kanaila, too,is

drawing the attention of the media. Names of his mother Kulwanti Devi and father Govardhan Pandey are also glowing in the light of his writings and glory.

We don't have any hesitation in saying that a number of volumes of 'Prāgdhārā' as well as our capability would not be sufficient to describe all his works and every aspect of his character and personality. But, dedicating this volume of 'Prāgdhārā' to this great patriarch, we have endeavoured honestly and to the best of our ability, to high light some important things about him.

II

Born at his maternal village, the boy Kedar Nath Pandey inherited the traditions and customs of a middle class 'Sanatan Brahmin' from his maternal grand father along with the stories of his military exploits and hunting adventures since childhood. He was sent to study at the *'Madarsa'* of Rani Sarai at the age of five. His maternal grand father wanted to teach him English but destiny changed the course of evénts. At the tender age of nine the couplets of *'Navajinda-Bajinda'*, which he came across in a third standard book, unconciously prompted this future *Bohemian* to take his maiden flight to Varanası.

At the age of only 11 years he was married to Ram Dulari who was five years older than him. His mother passed away when he was only 13 years old. At the age of 14 he left for Calcutta and served as a domestic servant over there.

After four month,s stay at Calcutta he came back home. Next year, his sister and grand mother (maternal) also passed away. He passed his Urdu Middle and Hindi Middle Classes at the age of 15 and 16 respectively. By that time apathy resulting from the demise of his close relatives and a dear friend compelled him to set himself free from the puritan grip of his ageing maternal grand father and once again he fled to Calcutta. This time, he got a clerical job at a shop. Over there, he was given intoxicant mixed sweets by some one and he had to be admitted in the medical college. After returning from Calcutta, this time, he started living in Kanaila.

At the age of 17 his enthusisam of adolescence drove him to Himalayas. After visiting Haridwar, Badari Nath and Kedar Nath, he stayed at Chakrapani Brahmin's place in Kashi. He enriched his knowledge by studying the *Laghu Kaumudi* and Sanskrit grammar over there. During this sojourn, he visited Chunar, Mirzapur and Allahabad, travelling all the way on foot.

In 1911, with the inspiration of a Nepali ascetic, he tried to propitiate Goddess Durga during 'Navaratri' period. He took vow to have *'darshan'* of the Goddess or else finish himself, and when he could not get success, he ate poisonoús Belladona seeds, but timely medical treatment saved his life. He could get his composer back after reading some travel accounts published in the *Saraswati* magazine and listening to the discourses of Swami Satyadeva Parivrajaka. He got admission in class seventh in Daya Nand School and started learning English and Mathematics. But again, after sometime, he started getting apathetic towards his studies.

In the year 1912, he became disciple of *Vaishnav Mahant Baba* of *Parsa Matha* of Saran and later on became his successor. He thought that Parsa would be too distant a place from Kanaila, where none of his relatives, neither father, nor maternal grand father, nor uncle would be able to follow and bother him and once he became proclaimed ascetic, nobody would be able to rope him in.[13]

Kedar Nath Pandey, by that time, had turned Ram Udar Das. Side by side the routine rituals of the *'Matha'*, he also studied 'Saraswati' and 'Devi'. But soon he got disenchanted because he could no longer cope with this environment and came back to Kanaila. He came to Ayodhya after visiting Hazipur, Asansol and Madras etc. in 1913. There he fought against the sacrifice of goats in a temple. Later on he came in contact with Arya Samajis and studied 'Satyarth Prakash'.

Though he came back home in 1914 but again took flight for Agra in 1915 and got admission in Arya Musafir School over there. He studied Sanskrit, Arabi, Persian, Religion and History for two years. Indulged in religious discourse with *maulvis* and priests. During this period, in 1915 itself, he started writing in 'Musafir'

in Urdu and in 'Bhaskar' in Hindi under the pen name Kedar Nath Vidyarthi.

He went to Lahore in 1916 to enhance his knowledge of Sanskrit. To propagate Arya Samaj, he travelled Lucknow, Kanpur and other places. Soon he got disillusioned even with Arya Samaj. In 1918, he learnt about Russian revolution through newspapers. In 1919 *Jaliyanawala massacre* lit revolutionary fire in him and ultimately, in 1921, under the influence of Mahatama Gandhi, he renounced asceticism and bore the torch of freedom movement.

He delivered his maiden political speech in Khandawa. Thereafter he made Parsa, the focal centre of his activities. He served down trodden, poor and flood affected people, distributed spinning wheels and spat venom against the foreign rule everywhere, for which he was arrested on 31st Jan. 1992. He confessed his offence and was sentenced to six months imprisonment. Buxar jail proved to be a hermitage for him. Besides, he started teaching Upanishadas and Vedanta to the prisoners, solved the problems *(samasya purti)* and started translating 'Kuran' in Hindi.

On 29th Oct. he was elected secretary of the District Congress Committee and participated in the congress session of Gaya. As soon as he returned from Nepal, after doing *darshan* of 'Pashupati Nath' in March-April 1923, he was again arrested and was sent to Bankipur and thereafter to Hazaribag jail. There he did indepth study of Ceylonese Majjhim Nikaya. He learnt mathematics, optics and astrology from Sankaracharya Swami Bharati Krishna Teertha of Kerala. He translated four English novels in Hindi. He also learnt Brahmi script. After spending two years in jail, when he came out in 1926, he travelled Kashmir, Laddakh and Leh etc. He met *Lamas* in Leh and returned via Shimla-Kinnaur route. He also attended Gauhati Congress Session. He delivered a speech in Kisan Sabha alongwith renowned leaders like Rajendra Prasad. He took an oath on 30th March 1927 not to return to Parasa unless Jamindari was abolished.

During his imprisonment in Hazaribag jail he developed deep interest in Buddhism. After exploring the possibilities of satisfying his quest for Buddhism in Sri Lanka at that time, he got himself absorbed in *Vidyalankar Pariven* in Sri Lanka with the help of Mahabodhi Society of Calcutta. From 19th May 1927 onwards for the next 19 months, he remained engrossed in studying Buddhist literature and teaching Sanskrit. He also sent articles for 'Saraswati' magazine from there and wrote Sanskrit Pathmala in five volumes. Mastered Singhalese and French languages. Thoroughly studied the publications of 'Pali Text Society' and 'Royal Asiatic Society', and was bestowed with the title of *Tripitakacharya.*

Now, his insatiable quest to fathom the depth of Sanskrit and Buddhist literature took him to Tibet across the Himalayas in 1929, via Kaushambi, Kushinagar and other Buddhist pilgrimage en route. Navigating across 'Brahma Putra' and rummaging through ancient scriptures, he reached chuori. After crossing the river he settled at 'Lhasa' for the time being and kept on surveying the surroundings therefrom. He could lay hands on some rare scriptures, which were translated in Tibetan language from Sanskrit long ago and had since vanished from India. When he arrived in India with pony loads of books, purchased from the scholarship money, which was being given to him at the rate of fifty rupees per month by the courtesy of Acharya Narendra Deva, and three hundred rupees sent to him by Bhadant Anand Kaushalyayan of Sri Lanka, alongwith a large number of rare writings and scripts, given to him as gift, he took the literary world by storm and his prodigious talent was acknowledged every where. Influenced by his researches and findings, the famous Russian scholar Scherbatsky invited him to Russia. But, after dwelling in the world of Buddhism, when he came back, he was so overwhelmed by Buddhist philosophy that at the very first opportunity he went to Sri Lanka in June 1930 and got himself initiated in Buddhism at Vidyalankar Vihar. He changed his earlier name Ramodar Sankrityayan, which he had adopted while leading the life of a Buddhist monk, to Rāhula Sānkṛityāyan. But when he again came back to India, he felt more duty-bound to fight against the British rule. Therefore, once again he started participating in the freedom movement. Again, he went to Sri Lanka wherefrom he went to Europe to propagate Buddhism.

In 1933, after returning from Europe he settled in Sri Lanka for sometime and translated *'Majjhim Nikaya'*

and Dhammapad. He also wrote a few other books on Tibet.

In 1934, he went to Tibet for the second time. His dynamism got over all the hinderances one by one and it appeared as if the doors of the monasteries, which were lying closed for years, were flinging themselves open to pave the way for this explorer. He kept on photographing and copying the writings and scriptures. The amazing coherence and consistency between the tramp and the penman was discernible, not only during those four months when kept on stalking monastery after monastery and copying scriptures, it was visible, at the same time, also, in the art of communicating and disseminating their authentic knowledge among the intelligentia through writing articles in the reputed research magazines.

In 1935, he propagated the preachings of Buddha, as far as Rangoon, Japan, Korea, Manchuria, Moscow and reached Lahore via Iran. Thereafter, he produced writings like 'Satami Ke Bachche' and 'Japan' etc. and edited a few rare manuscripts, which he had brought from Tibet.

His soul, which always dwelt across the Himalayas, drew him again towards the monasteries of Tibet. Again the sequence of searching and copying of rare scriptures continued for eight months. Third instalment of his findings reached India in Nov. 1936 and while he was arranging them, he got second invitation from the Soviet Academy.

He reached Moscow in 1937 via Iran. Thereafter, he landed at the Institute of Oriental Studies, Leningrad, where he became professor of Sanskrit. He also started teaching Sanskrit to Ms. Lola, secretary of the Deptt. of Indo-Tibetan Learning. In turn, Lola started teaching him Russian. This routine turned into romance, which ultimately resulted in matrimonial knot, symbolising his cosmopolitan out look.

In Sept. 1938, Lola gave birth to son Igor but by that time his father, an ardent belives as he was in the Buddhist dictum (monks ! keep on moving), had crossed over the great plateau of Pamir and had started rearranging some rare scriptures with his pen and camera.

He got involved in the Kisan movement after returning back to India and was arrested in 1939. He sat twice on fast for ten and seventeen days respectively, during his brief term in jail. After his release, he was elected president of the Kisan movement of Motihari. He was again arrested in 1940 during the Kisan movement but even during his 29 months term in jail, his overtures were distinct and different from others. By writing a 847 page treatise - 'Darshan Digdarshan' - he fully utilised his imprisonment period.

After his release, he roamed around Kanaila, Vijaywada, Uttarakhand etc. and thereafter, headed towards Siberia. On 4th June 1945 he landed at Leningrad to settle at his old abode. There he remained for two years with his wife and son and while doing teaching and learning, he kept on collecting material for writing the "Madhya Asia Ka Itihas". Since Russian government did not allow him to take his family to India, he came back alone.

His landing at Bombay port on 17th August 1947 was a pleasant coincidence - like India he, too, had a new beginning in his life. He dedicated himself, with full might and sincerity, to the reconstruction of a new india. He was elected president of Hindi Sahitya Sammelan in this very year. With his new vigour and enthusiasm, Rahula Baba performed so many rare feats which made 'Big Pundits bite their nails. He prepared an English to Hindi 'Official Dictionary, consisting of 16000 words, in fourteen days and draft of the Hindi version of Indian constitution within three days. He utilised every minute of his life by learning and enriching his knowledge bank and disseminating this knowledge among the seekers. In his relentless zeal, he made wandering a 'cult' and in 1948 wrote an eternal source of inspiration & energy for wanderers viz. 'Ghumakkar Shastra'. Its mere perusal was enough to take any one towards ethereal world and salvation.

During his continuous journey of writing, he got Kamala Periar in April 1949 in Kalimapong as his aide, who lateron became his beloved and ultimately his wife on Dec. 23, 1950. He kept on translating, collecting and consolidating new writings, one after another like 'Darjeeling Parichay', 'Meri jeevan Yatra' and so on.

After the birth of daughter Jaya in 1953 and son Jeta in 1955, materialistic bonds started shackling him. From this point onwards his life story took tragic turn. He started worrying about his family and problems of bread and butter. But it was not easy to change his basic mettle and shake his conviction. Here too, learning and teaching proved to be his trusted weapons and medium to fight his worries. Meanwhile he made a plan to publish Hindi Vishwakosh of Nagari Pracharini Sabha. After accepting the proposal of shouldering the responsibility of its chief editorship, he started collecting relevant material for its publication. He prepared the list of its deputy editors etc. But when this job was not entrusted to him till 1956, he got restless and frustrated.

When he went to Nepal to participate in the world Buddhist conference in that very year, he expressed his desire to go to China and of doing research in Tibet after meeting Mr. Chau Fu Chu, the general secretary of All China Buddhist Association, over there. In Oct. 1957, when he came to know at Varanasi that the job of publishing the Vishwakosh was not being entrusted to him, he was very much pained. His self respect was hurt badly. His health started deteriorating and his nature became irritable.

In 1958, due to efforts of Mr. Chau Fu Chu, he went to China on the invitaion of Chinese Govt. During his four months stay overthere, he delivered lectures on Buddhist religion. He could not fulfil his desire of going to Tibet to do further research due to political turmoil. As a result, he became so disturbed that he had had a serious heart attack at Peking. Per chance, during his eight months treatment, he got an invitation from Vidyalankar University of Sri Lanka at Peking itself.

Thus in 1959, at the age of 66, he reached Sri Lanka to adorn the post of Professor of philosophy. He left behind his family in India. There in Sri Lanka, he totally involved himself in teaching, reading and writing. He worked with incessant zeal. His robust physique started deteriorating due to continuous rigorous labour and financial problems of double establishment. His health started failing day by day. He grew diabetic. He could manage to reach Calcutta with great difficulties. When his health improved a little after two months, he again left for Sri Lanka. But after a few days he again had a spell of bad health and had to come back to India within two months. In 1961, Rāhula Ji came to Calcutta from Darjeeling. He started having premonitions about his death. He stopped writing diary on 8th Dec. and on 11th Dec. he had had an attack of amnesia. Wings of the free bird were clipped. Even the best of the Russian doctors could not cure him. At the last he left for heavenly abode on 14 April 1963 at the age of 70, after passing through a very painful and traumatic phase.

"Neither the age of seventy is small age nor the creation of more than a hundred books is a small job for a life time, yet if the demise of Rahula sounds untimely and sudden, it is only because of the fact that his creativity was unabated till his last ailment, and he remained absorbed in extracting the maximum from every moment in his characteristic style. Death of a person who does nothing and lazes around is immaterial or a normal happening, but if a person, who remains contiuously busy, dies, howsoever old he may be, mind does not accept his death. One wishes he should have lived for some more years."[22]

III

"Whether he was suffering from high fever or his body was badly enervated due to fasting, he would never work for less than 16 hrs. in a day, on the contrary it might go up to eighteen hrs."[13]

"He used to work tirelessly. Very few people could keep pace with him. He used to take work from two or three persons at a time. It used to be commmendable for any of his assistants if he could work with him for maximum four to six months. He always maintained continuity and pace of his study and writing, by disposing off his visitors summarily. He strongly disliked idling away ones time in gossiping."[10]

"Those who had seen Rāhula working regularly for eighteen to twenty hours daily, for years together, know that how badly he treated his own body. He never bothered for his own comfort, nor he ever cared for his illness. He only treated his body like a saddled horse, constantly whippint it. This used to be his way of life till the end."

"He restricted his movements so much that he did not have time even to take leisurely stroll and if he ever felt like taking a walk, he would pace up and down in his room itself, as if he had condemned himself to death cell. His body was badly exhausted and had started failing him." [22] "His capacity to work was astonishing even at the age of 67. He never slept before 2 A.M. He had converted both of his living rooms into an isolation ward. He had got all his ventilators covered with glass so that mosquitos and insects might not enter his room, and with the approach of dusk his servant would close all glass pane windows." [27]

That much of harsh labour contributed a lot to shorten his life but Rahula thought it better to shine like a meteoric blaze than to keep on smouldering till eternity, ('क्षणं प्रज्वलित श्रेयः, न च धूमायते चिरात') Only on the strength of this dictum, he created a vast world of writings.

Rahula was not from amongst such high priests, who after learning primary lessons in their mother tongue at their village, feel inferiority complex in writing in their mother tongue, when they attain some high position and who are often seen pretending as if they could not get flow in their mother tongue. On the contrary, even after learning scores of other languages, he gave priority to his mother tongue and revealed its capability to produce research literature. It was his firm belief that knowledge should trickle down to the common man and it is possible only through the medium of their language. He actualised his this thought in those days when it was said that sun never sets in the British empire and English language dominated every field of the society. Descending from our high seats, if we traverse across the world mingling with common people, we can very well understand that besides the erstwhile colonies, howseover small may be the size and population of a geographical entity (nation), its people possess immense pride and love for their language.

Baba demolished this misunderstanding that one does not get recognition by writing in Hindi. *'Volga se Ganga'* and *'Madhya Asia ka Itihas'* are its living testimony. These were transalated not only in Hindi and English, but in other foreign languages also. If the penmanship is excellent and writings research oriented, then normally foriegner also value it and hold it in a high esteem.

He showed special interest in collecting folk literatures. He put great emphasis on giving Hindi and its dialects an independent literary identity as well as on making them medium of education. He was expelled from the communist party on the question of Hindi but did not make compromise on this point. Discovery of *Doha Kosh* of *Sarhapa* (750 A.D.), from Ngr monastery of Tibet, was his another important contribution for Hindi. He was the first person to draw the attention of literary world towards the 'apabhransh' (corrupt) literature of Siddha Acharyas and thus traced the origin of Hindi literature 400 year earlier than the then recognised period.

His *Dakkhini Hindi Kavya Dhara* is a very useful book. In this book he had explained that Rekhta or 'Urdu' is one of the styles of ancient Hindi which were enriched by the writings of Wali Ullah, Mohammad Kuli and Qutub Shahi etc. His Hindi novels viz. *'Singha Senapati'* , *'Jaya Yaudheya'* and *'Madhur Swapna'*, - *'Vismrit Ke Garbha Mein'*, *'Jadu Ka Mulk'*, *'Da khunda'*, and *'Jeevani of Sardar Prithvi singh'*, which were translated from English to Hindi, are widely read.

Among his Buddhism related literature, *'Majjhim Nikaya,' 'Digha Nikaya', 'Vinaya Pitaka'*, Hindi translation of *'Dhammapada'* and *'Buddha Charya'* are the most important. The book *'Tibet Mein Bauddha Dharma'* provides details and deep knowledge about the contribution of Indian Buddhist scholars. Apart from this, he also contributed some more writings on the subjects, related with Buddhism.

His one of the greatest achievements was to bring to light some rare ancient scriptures of Sanskrit Buddhist literature, during his four adventurous journeys to Tibet, from some of the Buddhist monasteries. Their description has been published in the journal of the Bihar and Orrissa Research Society.

Some western scholars, specially Prof. Shoherbatsky of Russia and Tucci of Italy, had had an eye on these scriptures since long. These include Tanjur and Kanjur and some other scriptures which were believed to be extinct. Discovery of even a single scripture of the above mentioned category would have been sufficient

to bestow immortal fame on any discoveror. On hearing the news that these scriptures had been brought to India by Rahula ji, some western scholars viz Otto, Rudolf, Prof. Levi, etc. sent congratulations through overseas telegrams. Shcherbatsky invited him to visit Russia and made recommendation by writing a letter to Mr. K.P. Jayaswal to convene an International conference to highlight this discovery and to discuss its importance. He also wrote that they were very glad to read the news of the tremendous job done by Rahula ji by discovering the scriptures of Dharma Kirti. He called Dharma kirit- 'Kant of India'. Till then they were able to read only Chinese and Tibetan translations of his scriptures but that discovery would give them access to the original scriptures. He expressed his desire to see those scripture alongwith his assistant Dr. Vastrikov.

It was not so that Rahula ji would have felt complacent and sat relaxed after the fame, he got for discovering such a rare material. Like an outstanding research scholar, he published Shanti Rakshat's *'Ved Nyaya*, Dharma Kirti's *'Pramana Varttika'* Matracheta's *'Adhyardha Satak'*, Nagarjuna's *'Vigrah Vya Vartani'*, Manorath Nandi's *Pramana Varttik Vritti*, Pragyakar Gupta's *Pramana Varttika Bhasya*, and 'Sarhapa's *Doha Kosh.'* He translated Vasu Bandhu's '*Vigyapti Matrata Siddhi'* and wrote critiques of *'Abhi Dharma Kosh'*, *Hetu Bidu*, *'Samandha Pariksha'*, and *Pramana Varttika*.

Writing about Rāhula jī, Dr. Levy has written that since long, at least for about a century, since the period of Pandit Amrita Nand of Nepal, none of the Buddhist scholars could write such a beautiful language – the language which was used by Ashvaghosh, Nagarjuna and Vasu Bandhu - in such an authoritative manner. His *'Abhi Dharma Kosh'* gives testimony of his proficiency in Sanskrit. It reflects his background, his vast studies and multilingual knowledge.

He rated monk Rahula as one of the greatest Buddhist scholar of the contemporary literary world and treated him as one of the representatives of the ideals of Buddhism.[15]

His book *'Darshan Digdarshan'*, which besides being a critique of ancient and modern philosophical thoughts, also gives their introduction, is rated high among the books, written on philosophy. It was the first effort of its kind in Hindi. Islamic, European and Greek ideologies have been discussed from the Marxist point of view in it. In the end of this book, a comparative chart of Indian and foreign thinkers has also been given.

History and Archaeology had been his most favourite subjects. The wheel of his thought and writing moves on the king pin of these subjects. He has considered archaeological evidences as the most authentic material of history. He has used these materials amply in the composition of his writings. We can have glimpses of these materials regularly in his stories, novels and history books etc. In his travelogues, we may find accounts of such materials at almost every turn. Rahula ji was having tremendous capacity to use these materials, which shows his deep command of the subjects. If various experts of temple architecture, iconography, numismatics, literature, social sciences, customs, ancient patteries, paintings and scriptures etc. combine together, they would rarely be able to produce such a study. Rahul ji alone has done their equivalent work and some times has done, even greater than them. He possessed astonishing speed of reading the scriptures and writing crituque of scriptures and documents as well as doing their adaptation and translation. Even the scholars of these fields have praised his this quality.

'Puratatva Nibandhavali 'and archaeological number of 'Ganga' are the authentic documents of his deep interest in this subject. He has laid great emphasis on the participation of common men with scholars,in this field. He has explained, with great interest and an impressive style, the utility of their contribution in their analysis and conservation. In fact, the archaeological materials are found at so many places and in so many forms that it is impossible to exhume and consolidate them only on the strength of officers and scholars. Rahula directly exhorts common man for this in 'Puratatva Nibandhavali'.

None other than him could have put forth the concept of people's participation in archaeology in such a simple language. In this collection of essays, some very informative and research oriented essays on the subjects like 'Sravasti', 'Vikram Shila', 'Jatharia,' 'Tharus', 'Vajrayan aur Chaurasi Siddha', 'Tibet Mein

Chitra Kala' etc. are included along with maps and references. The material and sketches presented in these essays have been compiled and arranged very meticulously to make the subject easy and comprehensible.

The publication of 'Archaeological Edition' of 'Ganga' created a sensation in the contemporary literary world. Hithertobefore such an experiment had never been done in this language. Mainly, Rāhula jī had made it useful by the effects of his research works. Though a large number of discoveries have been done in the field of archaeology by now yet it is useful even today. Scholars like Vasudeva Sharan Agarwala, Bhagawat Sharan Upadhyaya etc. have openly recognise its importance.

Rāhulaji wrote his book 'Madhya Asia Ka Itihas' in two volumes, consisting of about 2400 pages, on the basis of the material, which he had collected during his Russian voyages. It is supposed to be an excellent work from the point of view of investigation and research. The material contained in this book had never been published at one place, in a consolidated form. A lot of source material of this topic was available in Russian Language and the places mentioned in it were situated in Soviet land. To go to that area and to understand Russian language, both were difficult impediments in the way of availing of the benifits of the research work which was done in Russia. But Rahula ji over came it easily. In this book he has given an elaborate description of the messages spread by the Indian Buddhist scholars and monks in the Middle Asia and their influence over it. For this purpose, he had made the fullest use of the reports of the Russian excavators and discoverers like Tolstaf etc. as well as of the material available in the English and other languages. The importance of this work may be understood by the fact that the western scholars learnt Hindi only to study it, and besides English, it was translated in other foreign languages. Alongwith, collecting material for this book, he also prepared a 'Russian - Sanskrit Shabda Kosha', consisting of 400 pages. Though this dictionary is still unpublished, it is supposed to be an unique work on the archaeological words and terminology.

'Volga se Ganga;, 'Singha Sena Pati' and 'Jay Yaudheya' are somre of his books which are written in such a true archaelogical background that the readers effortlessly get the glimpses of a particular era of a particular area.

His extra ordinary speed in writing on archaeology can be understood by the instance that once when he was entrusted with the job of preparing the history of that distt., by the District Gazetteer Committee of Azamgarh', he not only wrote the introductory history of that district by touring the whole district within six days, but he also collected fifty statues from various villages and gifted them over to Hari Audha Kala Bhawan Sangrahalaya, with their archaeological introduction.[5]

While reading the books, which Rahulji translated in Hazari bagh jail - viz. - 'Shaitan Ki Ankhen,' 'Vismriti Ke Garbha Maen', 'Jadu Ka Mulk' and 'Son Ke Dhal', - readers get a feel of the ancient cultures of Egypt and Africa etc. in them. These books are interesting like detective novels.

He adopted various religions one by one and after assessing, renounced them. But one religion remained with him life long which turned Kedar into Rāhula after showing him this world. And when he recognised this truth, he presented its philosophy in the form of 'Ghumakkar Shastra', for the benefit of others. This cult is the base of all his achievements, due to which he could do all that which has been mentioned above. In my opinion, this Shastra is his best contribution and is his best and the most benificial composition. It should be a worthy possession for every home. While eulogising wandering and the tramp, the very first chapter of this book arouses curiosity about them in such a manner as is evident from the following paragraph --

> 'No one can be a greater benefactor of the society than a wanderer. It is said that lord Brahma had taken the responsibility of creating, sustaining and destroying the world. But what to talk of the creation and destruction of the world, even the fact of his own very existence can not be proved, either by perceptible or by presumptive evide-nce...............'

If the crux and main theme of the book are appropriately utilised, it may bring about radical

changes in the field of education as well as in the society. Trekking and excursions should be made compulsory subjects, at least, up to eighth standard so that, by the time students complete their formal education, they may be able to become true Indians and a better person, after seeing and studying all the four corners of their country, mountains, forests, deserts,open plains, rivers, seas, various peoples of various places, their customs and rituals and their way of living, through their own eyes. The inevitable outcome of this process would be a better society.

The study of this Shastra is as good a way of salvation as taking bath in the mythological river, Triveni. The wandering cult is fundamentally opposed to the narrow concepts like casteism, communalism and parochi-alism etc. Kindness, humanitarianism, universal brotherhood and integration and happiness of all, are the binding factors of this cult. This cult, which opens the doors of knowledge and science and which denounces all sorts of superstitions, bigotories and orthodoxy, bears the key to denouement of so many unsolved problems of this age.

Rahula's wandering cult should be taken seriously. This does not mean simple touring for pleasures sake. Some of the great religious leaders and discoverers, such as Gargi, Buddha, Mahavir, Christ, Shankara Charya, Chaitanya Mahaprabhu, Guru Nanak, Darwin, Dayandand etc., had been precursors of this cult. Who can doubt that by treading on their path, one can make one's life useful and can do others welfare. The meaning is clear, one can perform ones routine by doing table work or sitting idle at home but to discover something, to find out the ways and methods of public welfare is not possible through this way. Though every one may not possess the ability of becoming excellent wanderer but existence becomes meanigless in the absenca of this quality. If one wants to discover minerals, flora or ancient sites, wants to assess public feeling or do experiment with the truth only exploration or wandering or excursion or by whatever name your may call it, is the way to lead towards progress. Therefore, everyone should follow this path unhesitatingly and carefreely.

It is hard to believe that one man can do so much; that an adolescent left his home, after passing middle standard from a school of a purely rural area and on the strength of his almost informal education, taught different subjects in two different foreign universities, and was honoured with the degree of D.Litt.; that he could develop his faculties and capabilities to such an extent that, not only in the remote corners of his country, he could talk to people in their languages in the scores of countries, he traversed; that while travelling continuously, he could spare so much time for reading and writing that even after publishing about 50,000 pages, some material was left to be published; that he wrote such a class as to make the scholars of the foreign countries aspire to work with him; that if need arose, keeping every thing aside, he would fight against the injustice of the British rule as well as against the injustice perpetrated by our own feudal lords and would spent five years in jail; that he delivered lectures with Mahatama Gandhi and Rajenddra Prasad and made political offices only as resting points in his onward journey; that he adopted five religions and studied serval others but used them, only, as a medium for his research.

Even the great wanderers of the world look dwarf infront of this ascetic who had traversed Tibet, China, Japan, Korea, Manchuria, accross the Soviet Union, valcaro Baku, had seen towers of Persia and Pisa. There had been great adventurous discoverers like Huen-Te- Sang, Fahyan, Scott, Columbus and Marcopolo etc but a wanderer like him, who travelled almost continuously for fourty years, is a rarity. If the above mentioned travellers would have cared to study grammar, Vedant and philosophy like Rahul, even crossing of Jaheran Pass would have proved a hard nut to crack for them. Hardly anyone of the well known scholars have written so elaborately and nicely on more than one subject, as Rāhula did. If they were required to copy down 500 Shlokas per day after reading voluminous books, in bone shattering cold of the platealu of Pamirs and after crossing inaccessible passes, their would have been ample apprehension of their dropping dead and forgetting grammar and shlokas. May be, they would have achieved all that but had it been possible for them to master the languages Viz. Tibetan, Chinese, Russian, Burmese, French, Pali, Prakrit etc. and scripts like Brahmi, Kutila, Newari, Ranjan and Vartula etc. Simultaneous. We can name a number of persons who may be experts of their respective subjects like grammar, literature, religion-philosophy, history and archaeology but a

confluence of all these subjects in one person, is inconceivable. It is even more improbable, that such a person should also possess a simple and bewitching personality, a robust physical constitution, extremely sweet nature and should be as graceful and impressive as Buddha, the enlightened one. Such an unique combination is disenible only in Rahula.

Such persons are born on the earth once in ages. They pass away after spellbinding and enlightening the masses by their prodigious and miraculous feats and paving the way for the posterity. It is said regarding such people that the almighty God would have created them with his own hand, during leisure, with extraordinary care. For them the following shloka of Kalidas suits most appropriately --

'तं वेधा विदधे नूनं महाभूत समाधिना ।'

(God has created them out of strange synthesis of great souls).

Remembering him, we bow in reverence.

English version by **Shree Prakash Singh**
Deputy Labour Commissioner
Lucknow

प्रमुख संदर्भ

1. Agrawala, V. S. 1963 'a' 'Mahapandit Rahula Sankrityayan', *Journal of the Oriental Institute, M.S. University of Baroda*, Baroda, Vol. XII, No. 3, (Reproduced in *Rahul Smriti* 1988, Indian Publishing House, New Delhi. pp. 430–438)

   1963 'b' Mahapandita Rahula Sankrityayan, *The Journal of the Bihar Research Society*, Vol. XLVII, pt. I–IV pp. 1–6, Jan. Dec. 1961.

2. अंचल, रामेश्वर शुक्ल 1988 राहुल सांकृत्यायन की एक अंतरंग छविः क्रान्तिमुखी प्रगति के बोधिसत्व, **राहुल स्मृति**, इण्डियन पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, पृ० 22–34.

3. Upadhyaya, Bhagwat Sharan 1959 'Madhya Asia Ka Itihas', Indian Literature, Vol.2, No. 2, *(Reproduced in Rahul Smriti, Op. cit.* pp. 424–429)

4. उपाध्याय, भगवत शरण (i) 1963 राहुल जी और पद्मभूषण, **उपमा,** उपमा प्रकाशन, 24/2 महात्मा गांधी मार्ग, कानपुर, जुलाई–अगस्त, पृ० 13–17

   (ii) 1988 "भारतीय अनुसंधाता राहुल", राहुल स्मृति, वही, पृ० 270–273

5. उपाध्याय, राम नारायण 1988 महापण्डित राहुल सांकृत्यायन और उनकी मध्य प्रदेश यात्रा, **राहुल स्मृति,** वही, पृ० 151–156.

6. कौसल्यायन, भदन्त आनन्द 1992 दंबदिउ पंडितमा : विद्यालंकार में दर्शन के महाचार्य, **साप्ताहिक हिन्दुस्तान,** 30 अगस्त, पृ० 34–35.

7. Gupta, Prajnakara 1935 *Vartikalankara (Bhasya)*, Edited by Tripitakacharya Rahula Sankrityayana, Appendix to *J.B.O.R.S.*, Vol. XXI, pt. II.

8. Jayaswal, K.P. 1937 'The Discoverer', *The Modern Review*, Vol. 61. (Reproduced in *Rahul Smriti)* pp. 419–423.

9. ठाकुर, उपेन्द्र 1988 'राहुल सांकृत्यायन : इतिहासकार और पुराविद् के रूप में', **राहुल स्मृति,** वही, पृ० 241–251.

10. त्रिपाठी, राम प्रताप 1963 "महापण्डित की महानुभाविता", **उपमा,** वही, पृ० 154–55.

11. Dharmakirti - *Pramanavarttikam,* Edited by Rahula Sankrityayana, Appendix to *J.B.O.R.S.*, Vol. XXIV PT. I,II, 1938

12. Nagarjuna - *Vigrahavyavarttani,* Edited by Jayaswal K.P. and Rahula Sankrityayana, Appendix to *J.B.O.R.S.*, Vol. XXIII, pt. pt. III 1937.

13. नागार्जुन 1947 'राहुल जी – उनका साहित्य और व्यक्तित्व', **हंस,** दिसम्बर, (राहुल स्मृति, पृ० 386–398 पर पुनः उद्धृत)

14. Pleshkov, A. 1988 Rahula Sankrityayana : Reminiscences of Soviet Indologists, *Rahula Smriti*, Ibid, pp. 416–418.

15. प्रभाकर, विष्णु 1992 'संस्कृति के परिव्राजक महापण्डित राहुल सांकृत्यायन', **साप्ताहिक हिन्दुस्तान,** 30 अगस्त, पृ० 40–42

16. Matriceta - *Adhyarddhasataka,* Edited By Jayaswal, K.P. and Rahula Sankrityayana, Appendix to *J.B.O.R.S.*, Vol. XXIII, pt. IV 1937

17. Manorathnandin - *Pramanavarttika Vritti* (With a commentary by Manorathanandin on Dharmakirti's Pramanavarttikam) Edited by Rahula Sankrityayana, to *J.B.O.R.S.*, Vol. XXIV, pt. III IV, 1938, Vol. XXV, Pt. III–IV 1939; Vol. XXVI Pt. I–III 1940.

18. माचवे, प्रभाकर, (i) 1982 **राहुल सांकृत्यायन,** साहित्य अकादमी, 35, फीरोज़ शाह रोड नई दिल्ली.

   (ii) 1988 'यात्री राहुल', **राहुल स्मृति,** वही, पृ० 351–370.

19. मिश्र, विद्या निवास 1992 "राहुल बाबा की पुण्य स्मृति में", **साप्ताहिक हिन्दुस्तान,** 30 अगस्त, पृ० 23.

20. मुंशी, राम शरण शर्मा; पुष्प माला जैन (प्रबंध) 1988 **राहुल स्मृति,** पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा०) लिमिटेड, नई दिल्ली.

21. मूले, गुणाकर (i) 1992 "जयतु जयतु घुमक्कड़ पंथा", **साप्ताहिक हिन्दुस्तान,** वही, पृ० 18–20

   (ii) 1992

   "कारावास में राहुल ज़ी का वैज्ञानिक अध्ययन–लेखन", तदेव, पृ० 20–22

   (iii) 1992 'एक दृढ़ संकल्प की वे यात्राएं !' **धर्मयुग,** 16 सितम्बर, पृ० 28–30.

22. राय अमृत 1963 "तेजस्वी राहुल", उपमा, वही पृ० 66–69.

23. Rao, Balkrisna 1988 'Scholar Gypsy', *Rahula* Smriti, *op.cit.*, pp. 439–441.

24. विद्यार्थी, गोविन्द 1988 'राहुल जी – जैसा मैंने उन्हें पाया' **राहुल स्मृति**, वही, पृ० 50–53

25. वोहरा, ओंकार लाल 1988 'विराट व्यक्तित्व के धनी, महापण्डित राहुल सांकृत्यायन', **राहुल स्मृति**, वही पृ० 14–17.

26. Santaraksita *Vadnyaya* of Dharma Kirti with the Commentry of Santaraksita, Edited by Rahula Sankrityayana, Appendix to *J.B.O.R.S.*, Vols. XXI & XXII.

27. शास्त्री, डा० शांति भिक्षु 1988 'राहुल जी : अन्तिम साढ़े तीन वर्ष, **राहुल स्मृति**, वही' पृ० 371–74.

28. शील (संपादक) 1963 **उपमा**, वही।

29. साहनी, भीष्म (i) 1988 'राहुल जी कुछ यादें', **राहुल स्मृति**, वही, पृ० 90–93

(ii) 1992 'राहुल जी', **साप्ताहिक हिन्दुस्तान**, 27 दिसम्बर पृ० 14.

30. सिन्हा, रमेश 1988 'राहुल जी' **राहुल स्मृति**, वही पृ० 50–53.

31. सांकृत्यायन, कमला (i) 1973 'बौद्ध साहित्य को राहुल जी की देन' **पालि साहित्य का इतिहास** (ले० राहुल सांकृत्यायन), हिन्दी समिति, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ (द्वितीय संस्करण) पृ० 1–16.

(ii) 1988 'महापण्डित राहुल सांकृत्यायन और भारत के नेत्रहीन, **राहुल स्मृति**', वही, पृ० 289–293.

(iii) 1992 'स्मृतियां', **साप्ताहिक हिन्दुस्तान**, वही, पृ० 24–26

32. Sankrityayana, Rahula (i) 1935 ' Sanskrit Palm–Leaf MSS. In Tibet ', *The Journal of The Bihar And Orrisa Research Society* (J.B.O.P.S.) Patna, Vol. XXI, Pt. I, pp. 21–43

(ii) 1937 'Second Search of Sanskrit Palm–leaf MSS In Tibet'. *J.B.O.R.S.*, Vol. XXIII. pt. I. pp. 1–57

(iii) 1938 'Search For Sanskrit MSS. In Tibet', *J.B.O.R.S.*, Vol XXIV, Pt. IV pp. 137–163

(iv) 1939 'Chart of Letters in Sanskrit MSS from Tibet', *J.B.O.R.S.* Vol. XXV, Pt. I pp. 64–65.

सांकृत्यायन, राहुल, भिक्षु जगदीश कश्यप (v) 1937 **पुरातत्व निबन्धावली**, इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग ।

सांकृत्यायन, राहुल;

(iv) 1937 **दीघ निकाय** (अनुवाद), भारतीय बौद्ध शिक्षा परिषद्, बुद्ध विहार, रिसालदार पार्क, लखनऊ द्वारा 1979 में पुनः प्रकाशित ।

सांकृत्यायन, महापंडित राहुल (vii) 1938 **साम्यवाद ही क्यों** छात्र हितकारी पुस्तकमाला, दारागंज इलाहाबाद ।

(viii) 1948 **घुमक्कड़ शास्त्र**, किताब महल, इलाहाबाद: तृतीय संस्करण 1967

(ix) 1963 **पालि साहित्य का इतिहास**, हिन्दी समिति, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ द्वारा 1973 में पुनः प्रकाशित ।

सांकृत्यायन, राहुल (X) मेरी जीवन यात्रा (5 खण्ड में) प्रथम दो खण्ड किताब महल, इलाहाबाद से 1944 एवं 1950 और अन्य तीन खण्ड राज कमल प्रकाशन, दिल्ली से 1967 में प्रकाशित ।

आभार

उपर्युक्त लेखन में समय-समय पर सन्दर्भ ग्रन्थ सुलभ कराने हेतु लेखक राज्य संग्रहालय, लखनऊ के डा० अजय कुमार पाण्डे, श्री श्यामा नन्दन उपाध्याय और उ० प्र० राज्य पुरातत्व संगठन लखनऊ के श्री गिरीश चन्द्र सिंह के प्रति आभारी हैं ।

राहुल जी के जीवन की प्रमुख तिथियां

परिशिष्ट 1

जन्म	बैसाख, कृष्ण अष्टमी, रविवार, 1950 विक्रमी, 9 अप्रैल, 1893 ई० । ननिहाल – पन्दहा, जिला आजमगढ़ में । गोत्र–सांकृत्य, पिता–गोवर्धन पांडे, माता–कुलवंती देवी । नाना–रामशरण पाठक । बचपन का नाम–केदारनाथ, चार भाई तथा एक बहिन में सबसे ज्येष्ठ ।
1898	पांच वर्ष की आयु में आजमगढ़ जिले के रानी सराय के मदरसे में **शिक्षा–प्रारम्भ** ।
1904	आजमगढ़ जिले के अहिरौला ग्राम की राम दुलारी से विवाह ।
1908–1909	क्रमशः उर्दू मिड़िल और हिन्दी मिडिल उत्तीर्ण ।
1910	हिमालय–यात्रा । वाराणसी में संस्कृत–शिक्षा । **देवी-भक्त** ।
1912–13	घर से भाग कर परसा–मठ के साधु और महन्त के उत्तराधिकारी । दक्षिण भारत की यात्रा ।
1913–14	दक्षिण भारत का पर्यटन ।
1915	आगरा के आर्य मुसाफिर विद्यालय में संस्कृत, अरबी, फारसी आदि का अध्ययन । **लेखन का प्रारम्भ** ।
1916	लाहौर में संस्कृत का अध्ययन । **आर्य समाज का प्रचार** ।
1921	राजनीति में प्रवेश । असहयोग आन्दोलन में भागीदारी।
1922	बक्सर जेल में छः मास । **जिला कांग्रेस के मंत्री**।
1923–25	हजारीबाग जेल में ।
1926	कश्मीर–लद्दाख यात्रा । गौहाटी कांग्रेस में भागीदारी ।
1927–28	श्रीलंका में **संस्कृत के अध्यापक**, बौद्ध साहित्य का अध्ययन । **त्रिपिटकाचार्य** की उपाधि प्राप्त की ।
1929–30	तिब्बत में सवा साल । पहली यात्रा ।**बौद्ध धर्म में प्रव्रज्या** ।
1932–33	इंग्लैंड और यूरोप में ।
1934	दूसरी तिब्बत यात्रा ।
1935	जापान, कोरिया, मंचूरिया, सोवियत संघ तथा ईरान की यात्रा । मार्क्सवादी दर्शन अपनाया ।
1936	तीसरी तिब्बत यात्रा से लौटने पर काशी की पण्डित सभा द्वारा महापण्डित की उपाधि से विभूषित ।
1937	सोवियत संघ में (दूसरी बार) रूसी युवती लोला से विवाह ।
1938	तिब्बत में चौथी बार । इसी यात्रा के दौरान सोवियत रूस में उनके पुत्र इगोर राहुलोविच का जन्म ।
1939	**किसान संघर्ष** अमवारी–सत्याग्रह । जेल में ।
1940–42	हजारीबाग जेल में ।
1943	चौंतीस साल बाद जन्म ग्राम में । उत्तराखंड की यात्रा ।
1944–47	लेनिनग्राद (सोवियत संघ) में **प्रोफेसर** ।
1947	हिंदी साहित्य सम्मेलन के सभापति ।
1949	**'घुमक्कड़ शास्त्र' की रचना** ।
1950	मंसूरी में अपना घर । कमला पेरियार से विवाह ।
1953	पुत्री जया का जन्म ।
1955	पुत्र जेता का जन्म ।
1958	चीन में साढ़े चार मास । **साहित्य अकादमी एवार्ड** से सम्मानित ।
1959–61	श्रीलंका में **दर्शन शास्त्र के महाचार्य** ।
1959	मंसूरी छोड़कर दार्जिलिंग में ।
1961	दिसम्बर महीने में 'स्मृति–लोप' का आघात ।
1962–63	सोवियत संघ में सात महीने चिकित्सा । भारत सरकार द्वारा **'पद्म भूषण'** और विद्यालंकार परिवेण विश्व विद्यालय, श्रीलंका द्वारा **साहित्य चक्रवर्ती** (डी० लिट्) की मानद उपाधि से विभूषित ।
अनन्त यात्रा	14 अप्रैल, 1963, सत्तर वर्ष की आयु में ।

राहुल जी की प्रमुख रचनाएं

क्र० सं०	रचना का नाम	काल	अन्य भाषाओं में अनुवाद
	उपन्यास		
1.	बाईसवीं सदी	1923	उर्दू, गुजराती, मराठी
2.	जीने के लिए	1940	
3.	सिंह सेनापति	1944	उर्दू, मराठी, गुजराती, तेलगू
4.	जय यौधेय	1944	मराठी, गुजराती
5.	भागो नहीं, दुनिया को बदलो	1944	
6.	मधुर स्वप्न	1949	गुजराती
7.	राजस्थानी रनिवास	1953	
8.	विस्मृत यात्री	1954	
9.	दिवोदास	1960	
10.	निराले हीरे की खोज	1965	
	कथा साहित्य		
11.	सतमी के बच्चे	1935	
12.	वोल्गा से गंगा	1944	उर्दू, सिंधी, गुजराती, मराठी, कन्नड़, मलयालम, तमिल, तेलगू, उड़िया, बंगाली, असमिया, नेपाली, बर्मी, अंग्रेजी, रूसी। (ब्रेल लिपि में भी प्रकाशित)।
13.	बहुरंगी मधुपुरी	1953	
14.	कनैला की कथा	1955–56	
	नाटक		
15.	नयकी दुनिया	1942	
16.	मेहरारुन के दुरदसा	1942	
17.	जपनिया राछ्छ	1942	
18.	जरमनवा के हार निहचय	1942	
19.	देस रच्छक	1942	
20.	ढुनमुन नेता	1942	
21.	ई हमार लड़ाई	1942	
22.	जोंक	1942	
	आत्मकथा		
23.	मेरी जीवन–यात्रा भाग–1	1944	
24.	–तदेव– भाग–2	1950	
25.	–तदेव– भाग–3	1967	
26.	–तदेव– भाग–4	1967	
27.	–तदेव– भाग–5	1967	

जीवनियां

28.	नये भारत के नये नेता खंड–1	1942	
29.	–तदेव– खंड–2	1942	
30.	बचपन की स्मृतियां	1953	
31.	अतीत के वर्तमान (प्रथम खंड)	1953	
32.	स्तालिन	1954	
33.	लेनिन	1954	
34.	कार्ल मार्क्स	1954	
35.	माओ–त्से–तुंग	1954	
36.	सरदार पृथ्वीसिंह	1955	मराठी, गुजराती
37.	घुमक्कड़ स्वामी	1956	
38.	मेरे असहयोग के साथी	1956	
39.	जिनका मैं कृतज्ञ	1956	
40.	वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली	1956	
41.	महामानव बुद्ध	1956	
42.	सिंहल घुमक्कड़ जयवर्धन	1960	
43.	कप्तान लाल	1961	
44.	सिंहल के वीर पुरुष	1961	

यात्रा वृत्तांत

45.	मेरी लद्दाख यात्रा	1926	
46.	श्रीलंका	1926-27	
47.	तिब्बत में सवा साल	1931	बंगाली
48.	मेरी यूरोप यात्रा	1932	
49.	यात्रा के पन्ने	1934-36	
50.	जापान	1935	
51.	ईरान (खंड–1)	1935-36	
52.	ईरान (खंड–2)	1935-36	
53.	मेरी तिब्बत यात्रा	1937	
54.	रूस में पच्चीस मास	1944-47	
55.	किन्नर देश में	1948	
56.	घुमक्कड़ शास्त्र	1949	
57.	सोवियत भूमि		
58.	सोवियत मध्य एशिया		
59.	दार्जिलिंग परिचय	1950	
60.	कुमायूं	1951	
61.	गढ़वाल	1952	
62.	नेपाल (अप्रकाशित)	1953	
63.	हिमाचल प्रदेश (अप्रकाशित)	1954	
64.	जौनसार देहरादून	1955	
65.	आजमगढ़ की पुराकथा (अप्रकाशित)	1956	
66.	एशिया के दुर्गम भूखंडों में	1956	
67.	चीन में क्या देखा ?	1960	
68.	हिमालय दर्शन		

निबंध

69.	साम्यवाद ही क्यों	1934	उर्दू, तमिल
70.	पुरातत्त्व निबंधावली	1936	
71.	दिमागी गुलामी	1937	
72.	तुम्हारी क्षय	1937	
73.	आज की समस्याएं	1944	
74.	साहित्य निबंधावलि	1949	
75.	अतीत के वर्तमान (खंड–1)	1953	
76.	अतीत के वर्तमान (खंड–2)	1953	
77.	राहुल निबंधावली (साहित्य)	1970	

विज्ञान

78.	विश्व की रूपरेखा	1942	मलयालम

समाजशास्त्र

79.	मानव–समाज	1942	बंगाली, गुजराती

राजनीति

80.	क्या करें ?	1937	
81.	सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास	1939	
82.	सोवियत न्याय	1939	
83.	राहुल जी का अपराध	1939	
84.	आज की राजनीति	1949	
85.	कम्युनिस्ट क्या चाहते हैं ?	1953	
86.	रामराज्य और मार्क्सवाद	1959	
87.	चीन के कम्यून	1960	

दर्शन

88.	वैज्ञानिक भौतिकवाद	1942	बंगाली
89.	दर्शन–दिग्दर्शन	1942	बंगाली, मलयालम
90.	बौद्ध दर्शन	1942	

धर्म

91.	इस्लाम धर्म की रूपरेखा	1923	
92.	बुद्धचर्या	1930	
93.	बौद्ध संस्कृति	1953	
94.	धम्मपद	1933	
95.	मज्झिम निकाय	1933	
96.	विनय–पिटक	1934	
97.	दीघ निकाय	1935	
98.	तिब्बत में बौद्ध धर्म	1935	

इतिहास

99.	मध्य एशिया का इतिहास (खंड–1)	1952	
100.	मध्य एशिया का इतिहास (खंड–2)	1952	अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में ।
101.	ऋग्वैदिक आर्य	1956	
102.	अकबर	1956	
103.	भारत में अंग्रेजी राज्य के संस्थापक	1957	

साहित्य का इतिहास

104.	पालि साहित्य का इतिहास	1963	
105.	हिन्दी काव्यधारा	1944	
106.	दक्खिनी काव्यधारा	1952	

लोक–साहित्य

107.	आदि हिंदी की कहानियां और गीतें	1950	

शोध–ग्रन्थ

108.	सरहपादकृत दोहा–कोश	1954	

कोश

109.	शासन–शब्दकोश	1948	
110.	तिब्बती हिंदी कोश (प्रथम खंड)	1974	
111.	जीव रसायन शब्दकोश (अप्रकाशित)		
112.	प्रत्य[illegible]शारीर शब्दकोश (अप्रकाशित)		
113.	रूसी–संस्कृत शब्दकोश (अप्रकाशित)		

संस्कृत

114.	संस्कृत पाठमाला, भाग–1	1928	सिंहली
115.	संस्कृत पाठमाला, भाग–2	1928	सिंहली
116.	संस्कृत पाठमाला, भाग–3	1928	सिंहली
117.	संस्कृत पाठमाला, भाग–4	1928	सिंहली
118.	संस्कृत पाठमाला, भाग–5	1928	सिंहली

तिब्बती

119.	तिब्बती बालशिक्षा	1933	
120.	पाठावली, भाग–1	1933	
121.	पाठावली, भाग–2	1933	
122.	पाठावली, भाग–3	1933	
123.	तिब्बती व्याकरण	1933	

सम्पादन–कार्य : हिन्दी

124.	तुलसी रामायण (संक्षेप)	1957	
125.	हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास (भाग–16)		

126.	गंगा का पुरातत्व अंक	1933	

सम्पादन-कार्य : पालि

127.	पालि-काव्यधारा (अप्रकाशित)		

सम्पादन-कार्य एवं टीका : संस्कृत

128.	अभिधर्म कोश	1930	
129.	विज्ञप्तिमातृता सिद्धि	1934	
130.	वाद-न्याय:	1935-36	
131.	सूत्र कृतंग		
132.	प्रमाण-वार्तिकम्	1935	
133.	अध्यर्धशतकम्	1937	
134.	प्रमाण-वार्तिकम् भाष्य	1935	
135.	प्रमाण-वार्तिकम् वृत्तिः	1940	
136.	प्रमाण-वार्तिकम् स्ववृत्तिः	1936	
137	विग्रह व्यावर्त्तिनी	1937	
138.	विनय सूत्र	1943	
139.	हेतु बिन्दु	1944	
140.	संबंध परीक्षा	1944	
141.	महापरिनिर्वाण सूत्र	1951	
142.	निदान सूत्र (परीक्षा)	1952	
143.	संस्कृत काव्यधारा	1955	

अनुवाद

144.	शैतान की आंख	1923	
145.	जादू का मुल्क	1923	गुजराती
146.	सोने की ढाल	1923	
147.	विस्मृति के गर्भ में	1923	गुजराती
148.	दाखुंदा	1947	मलयालम
149.	जो दास थे	1947	
150.	अनाथ	1948	
151.	संविधान का मसौदा	1948	
152.	अदीना	1951	
153.	सूदखोर की मौत	1951	
154.	शादी	1952	

राहुल जी को प्राप्त सम्मान एवं उपाधियां

1. **त्रिपिटकाचार्य** – श्रीलंका विद्यालंकार परिवेण ।
2. **महापंडित** – काशी पंडित सभा
3. **साहित्य वाचस्पति** - हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद ।
4. **डी० लिट्** (मानद) – भागलपुर विश्वविद्यालय ।
5. **साहित्य चक्रवर्ती** (डी० लिट् मानद) – श्रीलंका विद्यालंकार परिवेण ।
6. **पद्मभूषण** – भारत सरकार ।

MSS. Photographed or copied

परिशिष्ट 2

Subject		Name	Author	Size in Slokas	Complete	Incomplete
Poetry	1.	X अध्यर्धशतक S	मातृचेट	153	"	
	2.	दोहा कोश Ng	सरह	60	"(?)	"
	3.	सुभाषितरत्नकोश Ng	भीमार्जुनसोम	1,500	"	
Prosody	4.	छन्दोरत्नाकर Ng	रत्नाकरशान्ति	700	"	"
Philosophy	5.	(दर्शन) S	Unknown	6,000	"	"
	6.	अभिधर्मकोशकारिका Ng	वसुबन्धु	550	"(?)	
	7.	" भाष्य Ng	"	15,000		"
	8.	अभिधर्मप्रदीप Sh -	Unknown	1,500		"
	9.	अभिधर्मसमुच्चय Sh	असंग	250	"	
	10.	" भाष्य Sh	(यशोमित्र)	4,000	"	
	11.	x तर्कज्वाला Sh	भाष्य	1,000		"
	12.	दर्शन Sh	Unknown			"
	13.	मध्यान्तविभंगभाष्य Ng	वसुबन्धु	1,000	"	
	14.	महायानोत्तरतन्त्र Ng	मैत्रेय	500		"
	15.	" टीका Sh	यशोमित्र	200		"
	16.	x योगाचारभूमि S	असंग	8,000		"
	17.	वज्रसूची Ng	अश्वघोष	150	"	
	18.	x विग्रहव्यावर्त्तनी Sh	नागार्जुन	450	"	
	19.	विंशिकाविवृत्ति Sh	Unknown	150	"	
Logic	20.	अपोहसिद्धि Sh	रत्नकीर्ति	1,200	"	
	21.	अवयविनिराकरण Sh	"	200	(?)"	
	22.	आगमप्रामाण्यनिरास Sh	Unknown	50	"	
	23.	क्षणभंगसिद्धि Sh	रत्नकीर्ति	1,000	"	
	24.	x क्षणभंगाध्याय Sh	ज्ञानश्री	3,000	"	
	25.	चित्ताद्वैतप्रकरण Sh	रत्नकीर्ति	700	"	
	26.	तर्करहस्य Ng	Unknown	2,000	"	
	27.	नैरात्म्यसिद्धि Ng	जितारि	50	"	
	28.	(न्यायटीका) Ng	Unknown			
	29.	न्यायबिन्दुटीका Ng	दुर्वेकमिश्र	5,000	"	
	30.	प्रज्ञालंकार Ng	Unknown	60	"	
	31.	प्रमाणवार्त्तिकटीका Ng	"	..		"
	32.	x प्रमाणवार्तिकभाष्य S	प्रज्ञाकरगुप्त	15,000	"	
	33.	x प्र० वा० वृत्ति Sh	मनोरथनन्दी	10,000	"	
	34.	x प्र० वा० स्ववृत्ति S	धर्मकीर्ति	800		"
	35.	x प्र० वा० स्व० टीका S	कर्णकगोमी	8,000	"	
	36.	प्रमाणान्तर्भावप्रकरण Sh	रत्नकीर्ति	200		
	37.	वादरहस्य Sh	Unknown	3,000	"	
	38.	व्याप्तिनिर्णय Sh	रत्नकीर्ति	1,000	"	
	39.	सर्वज्ञसिद्धि Sh	"	1,000	"	

					"	
	40.	सर्वज्ञसिद्धिसंक्षेप Ng	शंकरनंदन	100	"	
	41.	सहोपलम्भासिद्धि Ng	जितारि	100	"	
	42.	सामान्यनिराकरण Sh	रत्नकीर्ति	750	"	
	43.	स्थिरसिद्धि दूषण Sh	"	800	"	
	44.	हेतुबिन्द्वनुटीका Ng	दुर्वेकमिश्र	5,000	"	
Vinaya	45.	उपसम्पदाज्ञप्ति Ng	(विनय)	70	"	
	46.	प्रातिमोक्षसूत्र Ng	"	400	"	
	47.	" टीका S	Unknown	100		"
	48.	भिक्षुविनय S	Unknown	200		"
	49.	विनयकारिका S	विशाख	150		"
	50.	विनयक्षुद्रक Sh	(विनय)	3,000	"	
	51.	विनय (लोकोत्तरवादि-) Ng	(")	1,200		
	52.	विनयसूत्र Sh	गुणप्रभ	500	"	
	53.	" वृत्ति Sh	"	300	"	
	54.	" " S	"	300		"
	55.	श्रामणेरकारिका Ng	जयरक्षित	300		"

X = Books with this sign (x) are copied, others are photographed.
S = MS. belonging to Sa–skya, Ng = Nagor, Sh = Sha – Lu.

Courtesy: The Journal Of The Bihar and Orissa Research Society, 1935, Vol. XXI, Pt. I, pp. 27–43; 1937, Vol. XXIII, Pt. I., pp. 21–57; 1938, Vol XXIV, Pt. IV, pp. 143–163.

I. Kun-de-Ling monastery (Lhasa)

Vol.No.			Name	Author	Script	Size (in inches)	Leaves		Lines (in each page)
I		1.	अष्टसाहस्रिका –T प्रज्ञापारमिता		मागधी	..	..		6
II		2.	सद्धर्मपुण्डरीकसूत्र T		"	..	..		5
III		3.	वादन्यायटीका T (विपञ्चितार्था)	शांतरक्षित	(कुटिला)	$11\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{2}$	90		(8 or 9)
			II. Spos-khang monastery (near Gyantse)						
I		4.	अष्टसाहस्रिका – प्रज्ञापारमिता T and others						Incomplete
II.		5.	A commentary on some सर्वास्तिवाद Sutras	अश्वघोष[1]	..	..	..		..
		6.	... परिकथा	"	..	..	..		..
III	1.	7.	*मध्यान्तविभंगकारिका T	मैत्रेय	नेवारी	..	..		..
	2.	8.	*मध्यान्तविभंगसूत्र T	"	"	..	..		..
	3.	9.	*अभिसमयालंकार T	"	"	..	..		..
			III. Sa-lu monastery (near Si-ga-rtse)						
I.		10.	समाधिराजसूत्र T			$10 \times 2\ 2\frac{1}{3}$			Incomplete
II	2.	11.	काशिका पञ्चिका	जिनेन्द्रबुद्धि	वर्तुल	$12\frac{2}{5} \times 2\frac{1}{3}$			"
III	3.	12.	भिक्षुप्रकीर्णकविनय	..	"	$21\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{3}$			Complete
IV	4.	13.	Miscellaneous leaves.	..	"	$21\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{3}$		..	
V	5.	14.	महाप्रतिसरा विद्याराज्ञीकल्प etc. T (पञ्चरक्षा)		नेवारी	$23\frac{1}{3} \times 2$	..		..
VI	1.	15.	प्रज्ञापारमिता (?)	..	रंजन	$12\frac{2}{3} \times 2$	..		Incomplete
	2.	16.	मंजूश्रीनामसंगीति T	..	वर्तुल	"	..		"
	3.	17.	व्याकरण (लिंग)	..	नेवारी	"	..		"
	4.	18.	रक्तयमारितंत्र T	..	वर्तुल	"	..		Complete
VII	1.	19.	अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता T	..	रंजन	20x2	..	..	Incomplete
	2.	20.	अभिसमयालंकारविवृति T(?)	..	वर्तुल	"	..		"
VIII	1.	21.	सर्वज्ञसिद्धि	रत्नकीर्ति	पुराणमैथिली	$21\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{3}$	1–17		Complete
	2.	22.	अपोहसिद्धिप्रकरण	"	"	"	18–36	..	"
	3.	23.	क्षणभंगसिद्धि	"	"	"	37–45	..	"
	4.	24.	प्रमाणान्तर्भावप्रकरण	"	"	"	45–47	..	"

	5.	25.	व्याप्तिनिर्णय	"	"	"	47–59	..	"
	6.	26.	स्थिरसिद्धिदूषण	"	"	"	59–69	..	"
	7.	27.	चित्ताद्वैतप्रकरणवाद	"	"	"	69–77		Complete
	8.	28.	अवयविनिराकरण	"	"	"	77–82		"
	9.	29.	सामान्यनिराकरण	"	"	"	82–91	..	"
IX		30.	पंचविंशतिसाहस्रिका प्रज्ञापारमितोपदेश	बुद्धदास (आचार्य)	वर्तुल	$21\frac{1}{3} \times 2$	107	..	"
X	1.	31	भट्टारकवज्रासनसाधनोपदेश etc.	..	वर्तुल	$20\frac{2}{3} \times 2$	3	..	"
	2.	32.	वज्रामृततन्त्र T	..	"	"	8	..	"
	3.	33	.... पंजिका	भीमदेव	"	"	7	..	"
	4.	34.	अचिन्त्याद्वयक्रमोपदेश T	आर्य कुद्दालियाद	"	"	3–8	..	Incomplete
	5.	35.	समयमुद्रापुरुषकार	नागार्जुन	"	"	3	..	Complete
	6.	36.	महागोप्यतत्वोपदेश T	दारिकपाद	"	"	I	..	"
	7.	37.	ज्ञानसारसमुच्चय T	आर्यदेव	"	"	3	..	"
	8.	38.	श्रीसंवरस्तोत्रटीका	वज्रपाणि	"	"	47	..	Incomplete
XI	1.	39.	... महायानसूत्र	..	"	$20\frac{2}{3} \times 2\frac{1}{3}$	..	..	"
	2.	40.	महायानविंशिका T	नागार्जुन	शारदा	"	..	..	"
	3.	41.	...	प्रशान्तमित्र	..	"	..	..	"
	4.	42.	रत्नगुणसञ्चपगाथा T – व्याख्या	हरिभद्र	..	"	..	..	"
	5.	43.	महायानोत्तरतन्त्र T	(मैत्रेयनाथ)	शारदा	"	..	..	"
	6.	44.	सूत्रालंकार(वि) भंग	..	"	"	..	..	"
	7.	45.	अभिसमयालकार प्रज्ञोपदेशशास्त्र	..	वर्तुल	"	..	..	"
	8.	46.	अभिसमयालंकारालोक T	(हरिभद्र)	पुराण नगरी	$20\frac{2}{3} \times 2\frac{1}{3}$		"	

IV. Ngor monastery (one day's journey from Si–gar–tse)

I	1.	47.	अर्थविनिश्चयसूत्र T	..	वर्तुल	$22 \times \frac{2}{3} \times 2$	16	..	Page 13 missing
	2.	48.	अर्थविनिश्चयसूत्रनिबंधन	वीर्यश्रीदत्त	"	"	44	..	Complete
	3.	49.	भूतडामरतंत्र T	..	"	"	23	..	Incomplete
	4.	50.	भूतडामरभट्टारकसाधन	..	"	$22\frac{2}{3} \times 2$	8	..	Complete
	5.	51.	भूतडामरमण्डलोपथिक	सुभूतिपालित	"	"	13	..	"
	6.	52.	कुरुकुल्लाकल्प	..	"	"	10	..	"
	7.	53.	आदिकर्मावतार	मंजुकीर्ति	मागधी	"	13	..	"
	8.	54.	बुद्ध ... (पूजाविधि)	"	..	"	10	..	"
	9.	55.	आदिकर्मावतारप्रतिबद्ध	"	..	"	5	..	"
II.		56.	अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता T	..	रंजन	$22\frac{2}{3} \times 2\frac{1}{6}$	3–207	6	Incomplete
III		57.	" T	..	"	$22\frac{2}{3} \times 2$	174	6	Complete
IV		58.	" T	..	"	$22 \times 2\frac{1}{6}$	233	6	Complete
V		59.	अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता T	..	रंजन	$21\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{6}$	..	5	Incomplete

VI		60.	अष्टसाहस्रिका प्र० पा० T	..	मागधी	$14 \times 2\frac{1}{3}$	..	6	Incomplete
VII	1.	61	" T	..	"	$22 \times 2\frac{2}{3}$	202	6	Complete
	2.	62.	व्याकरण(?)	..	"	"	10	7	Incomplete
VIII	1.	63.	अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता T	..	रंजन	$21\frac{1}{3} \times 2$	..	5	"
	2.	64.	"	..	"	"	..	5	"
	3.	65.	.. (काव्य–) टीका	..	कुटिला	"	..	6	"
	4.	66.	(दर्शनग्रंथ)	..	"	"	4	6	"
	5.	67.	एकवृक्षादिटीका	..	"	$21\frac{1}{3} \times 1\frac{2}{3}$	2	4	"
	6.	68.	महायानोत्तरतंत्र T	(मैत्रैयनाथ)	"	$21\frac{1}{3} \times 2$	11	7	"
	7.	69.	(दर्शनग्रंथ)	..	"	"	3	8	"
	8.	70.	प्रकरणयोगपीठ ..	..	"	"	5	5	"
	9.	71.	चक्रसंवरविवृति ..	..	"	"	..	8, 11	"
	10.	72.	गुह्यसमाज T	..	कुटिल	$21\frac{1}{3} \times 1\frac{2}{3}$	33	6	Incomplete
IX		73.	शतसाहस्रिका प्रज्ञा पारमिता T	..	रंजन	$21\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{6}$	639	6	"
X	1.	74.	न्यायबिन्दु अनुटीका (धर्मोत्तरप्रदीप)	दुर्व्वेकमिश्र	मागधी	"	84	8	Complete
	2.	75.	(हेतुबिन्दु–अनुटीका)	"	"	"	70	8	"
XI	1.	76.	महामंत्रानुसारिणी महाविद्याराज्ञी T	.	रंजन	$21\frac{1}{3} \times 2$	1–10	6	Illustrated
	2.	77.	महासहस्रप्रमर्दिनी T	..	"	"	–17	"	"
	3.	78.	महामायूरी विद्याराज्ञी T	..	"	"	–40	"	"
	4.	79.	सीतवती महाविद्याराज्ञी T	..	"	"	–42	"	"
	5.	80.	महाप्रतिसरा महाविद्याराज्ञी T	..	"	"	–58	"	"
	6.	81.	महाकालतंत्र T	..	मागधी	"	37	"	Incomplete
XII	1.	82.	(चांद्रव्याकरणटीका, सुबन्त)	..	मागधी	$21\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{3}$	16	5	"
	2.	83.	कलापवृत्ति T	दुर्गसिंह	मैथिली	"	88	7	"
XIII		84.	क्रियासमुच्चय	मंजुग ..	नेवारी	$13\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{3}$	333	7	Complete
XIV	1.	85.	कालचक्रतंत्र T	..	..	$12\frac{2}{3} \times 2$	120	6	"
XV	1.	86.	सांकथ्यविनिश्चय from अभिधर्मसमुच्चयभाष्य T (यशोमित्र)	..	मागधी	$11\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{6}$	149	6	"
	2.	87.	(अर्थ) विनिश्चयसूत्र T	..	"	"	7	7	"
	3.	88.	(अर्थ) विनिश्चयसूत्रनिबन्धन T	वीर्यश्रीदत्त	"	"	41	9	"
	4.	89.	छन्दोरत्नाकर T	रत्नाकरशान्तिपाद	मैथिली		27	6	"
XVI		90.	भाषावृत्ति	पुरुषोत्तमदेव	"	12x2	..	7, 8	Complete(?)
XVII	1.	91	हेवज्रटिप्पण	सरोरुववज्र	मागधी	$1\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{6}$	31	7	Complete
	2.	92.	हेवज्रटीका	..	"	"	31	7	"
	3.	93.	हेवज्रसाधन(तत्त्वावतार)	..	"	"	13	7	"
XVIII	1.	94.	पंचक्रम T	नागार्जुन	नेवारी	$12\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{6}$	1–13	9	"
	2.	95.	वज्रसत्वसाधन T	चन्द्रकीर्ति	"	"	–19	"	"

					"	"	−21	"	"
	3.	96.	अनुत्तरसंवर	शाक्यमित्र	"	"	−28	"	"
	4.	97.	उत्पत्तिक्रमसाधन	चन्द्रकीर्ति	..	नेवारी	−38	"	"
	5.	98.	पिंडीक्रम T (?)	अंगुरिपाद	"	"	−42	"	"
	6.	99.	बलितत्वाधिकार	..	"	"	−59	"	Incomplete
	7.	100.	कर्मान्तविभागमेलावण etc.	..					"
	8.	101.	व्याकरण (?)	..	मागधी	$12 \times 1\frac{2}{3}$	..	..	
XIX	1.	102.	श्रामणेरकारिका टीका	जयरक्षित	"	10 x 2	..	5	Complete (?)
	2.	103.	उपसम्पदाज्ञप्ति	..	"	"	28	5	"
XX	1.	104.	त्याद्यन्तप्रक्रिया (कलाप) T	सर्वधर	"	$12\frac{2}{3} \times 2\frac{1}{6}$	..	6	"
	2.	105.	अभिधर्मकोशकारिका T	वसुबन्धु	"	$11\frac{1}{3} \times 1\frac{2}{3}$	1–43	4	Incomplete
	3.	106.	चण्डमहारोषणतंत्र T	..	"	$10\frac{1}{3} \times 2$	2–48	5	"
XXI	1.	107.	(व्याकरण टीका)	प्रज्ञावर्म	शारदा	12x2	23	6	Complete ?
	2.	108.	(वज्रयान ग्रन्थ)	..	कुटिला	"	..	6	" (?)
	3.	109.	काशिकाविवरणपंजिका	जिनेन्द्रबुद्धि	मैथिली	$12 \times 1\frac{2}{3}$	40	5	(Pāṇini i.1)
	4.	110.	बोधिचर्यावतार T	शान्तिदेव	मागधी	"	14	..	Incomplete
	5.	111.	(वज्रयान work)	..	"	12x2	..	..	"
XXII		112.	(गुह्यसमाज–)प्रदीपोद्योतन टीका T	चन्द्रकीर्ति	..	$12 \times 2\frac{1}{3}$	176	7	Complete
XXIII		113.	कालचक्रटीका T विमलप्रभा	(अवलोकितेश्वर)	"	10x2	..	5	" (?)
XXIV	1.	114.	काव्यादर्श T	दण्डी	"	$10\frac{2}{3} \times 2$	23	7,8	Complete(?)
	2.	115.	विंशिकाविवृति	..	"	$11\frac{2}{3} \times 2\frac{1}{3}$	..	7	" (?)
	3.	116.	सूत्रालंकार T	मैत्रेय	"	"	..	7	" (?)
	4.	117.	अभिसमयसमुच्चयटीका	..	"	"	..	7	
XXV		118.	हेवज्रडाकिनीजालमहातंत्रटीका (वज्ररत्नावली)	आर्यदेव	"	$10\frac{2}{3} \times 2\frac{1}{3}$	239	5	" (?)
XXVI	1.	119.	हेवज्रसाधनोपयिक	सरोरुहपाद	कुटिला	$11\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{3}$	1–8	7	Complete
	2.	120	हेवज्राख्ययुगनद्ध T	अद्वयवज्र	"	"	−22	"	"
	3.	121.	हेवज्रसत्यविकाश	दिवाकरचन्द्र	"	"	−46	"	"
	4.	122.	हेवज्रसाधन ज्ञाननप्रदीप	"	"	"	−61	"	"
	5.	123.	चित्तविशुद्धि	"	"	"	−62	"	"
	6.	124.	हेवज्रबलिविधि	"	"	"	−65	"	"
	7.	125.	हेवज्रविशुद्धिसाधन T	अवधूतिपाद	"	"	−80	"	Complete
	8.	126.	हेवज्राभिसमयतिलक T	शाक्यरक्षित	"	"	−107	"	"
	9.	127.	हेवज्रसाधन T	अनङ्गवज्र	"	"	−114	"	"
	10.	128.	" T	"	"	"	−123	"	"
	11.	129.	भवशुद्धि	करुणाबलवज्र	"	"	−140	"	"
	12.	130.	परमगंभीरोत्तानक्रम	दिवाकरचन्द्र	"	"	−156	"	"
	13.	131.	हेरूकसाधन T	गर्भपाव	"	"	−160	"	"
	14.	132.	"	अललवज्र	"		−164	"	"
	15.	133.	हेरुकभट्टारकसाधन	आनन्दगर्भपाद	कुटिला	"	−186	"	"

	16.	134.	हेवज्रसाधन	महदपाद	"	"	–197	"	"
	17.	135.	"	सहजवज्र	"	"	–201	"	"
	18.	136.	(हेवज्र) पूजाविधि	शाश्वतवज्र	"	"	–202	"	"
	19.	137.	अभिसमयक्रम	..	"	"	–204	"	"
	20.	138.	हेवज्रसाधन	..	"	"	–218	"	"
	21.	139.	"	"ज्ञानवज्र"	"	"	–224	"	"
	22.	140.	हेवज्रस्तुति	समाधिवज्र	"	"	–228	"	"
	23.	141.	,,	..	"	"	–230	"	"
	24.	142.	हेवज्रचक्रविंशिका	सरोरुहवज्र	"	"	–231	"	Complete
	25.	143.	हेरुकस्तुति	कण्हपा	"	"	–231	"	"
	26.	144.	हेवज्रयोगिनीस्तुति	..	"	"	–235	"	"
	27.	145.	नैरात्म्यस्तुति	..	"	"	–235	"	"
	28.	146.	नैरात्म्यसाधन	..	"	"	–245	"	"
	29.	147.	"	रत्नाकरशांति	"	"	–249	"	"
	30.	148.	"	दिवाकरचन्द्र	"	"	–267	"	"
	31.	149.	बलिचक्रविधि	..	"	"	–271	"	"
XXVII		150.	अमरकोशटीका (कविकामधेनु)	सुभूतिचन्द्र	मागधी	12 x 2$\frac{1}{3}$	192–389	7,8	Incomplete
XXVIII		151.	हेरुकसाधनपञ्जिका	..	,,	10$\frac{1}{3}$x 2	123	5	Complete
XXIX	1.	152.	कलापव्याकरणटीका	उत्सवकीर्ति	,,	"	123	5	Incomplete
	2.	153.	त्रिलिंङ्गप्रकरण	मंजु	..	"	88	6	Complete
XXX		154.	... (महायान) सूत्र	..	"	7 x$\frac{1}{3}$x 2	174	5	"
XXXI		155.	हेरुकाभिधानमंत्रोद्धार etc.	..	मैथिली	21x2	..	5	Incomplete
XXXII		156.	Loose leves on व्याकरण, लक्षण etc.	..	..	..	..	..	Incomplete
XXXIII	1.	157	रसप्रकाशमार्तण्ड *	गोविन्दनाथ	नागरी	10 x 3$\frac{1}{3}$	44	6	Complete
	2.	158.	नैरात्म्यसिद्धि *	जेतारिपाद	शारदा	8$\frac{2}{3}$x 3	..	7	"
XXXIV	1.	159.	धर्मपद	..	मागधी	10 $\frac{2}{3}$x 2	21	6	"
	2.	160.	मध्यान्तविभङ्गकारिकाभाष्य	वसुबन्धु	"	"	40	6	"
	3.	161.	वनरत्नस्थविरस्तोत्र	..	नेवारी	10 $\frac{2}{3}$x 1$\frac{5}{6}$	1	4	"
	4.	162.	अचलक्रमद्वय T	वनरत्न	"	"	2	4	"
XXXV	1.	163.	एकजटास्तोत्र	..	नागरी	6 x 1$\frac{2}{3}$	2	6	"
	2.	164.	गणपतिहृदयधारणी	..	"	7 $\frac{1}{2}$x 1$\frac{5}{6}$	3	5	"
	3.	165.	पंचरक्षाबलि	..	मैथिली	8 $\frac{2}{3}$x 1 $\frac{1}{3}$	4	4	"
	4.	166.	वज्रसूची	..	नागरी	"	10	4,5	"
XXXVI		167.	Loose leaves	Tamil	वर्तुल	51$\frac{1}{3}$x 1$\frac{1}{3}$	..	..	..
XXXVII	1.	168.	सर्वज्ञसिद्धिसंक्षेप	शंकरनन्दन	वर्तुल	10$\frac{2}{3}$x 2	..	7	Complete
	2.	169.	A Commentary on some Nyāya text	..	रंजन	11$\frac{1}{3}$x 2	70	6	"
	3.	170.	तर्करहस्य	..	नेवारी	10$\frac{2}{3}$x 2$\frac{1}{6}$	50	7	"

XXXVIII	1.	171.	वादन्यायटीक (?)	..	कुटिला	$11\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{3}$	42	10	"
	2.	172.	रतिरहस्य	कोकपंडित	"	$10\frac{2}{3} \times 2\frac{1}{6}$	17	11	"
	3.	173.	प्रज्ञालंकारकारिका	..	मागधी	$11\frac{1}{3} \times 2$	25	6	"
	4.	174.	सर्वज्ञसिद्धिकारिका	..	"	"	..	..	"
	5.	175.	आगमप्रामाण्यकारिका	..	"	"	..	..	"
	6.	176.	वादन्याय T	धर्मकीर्ति	कुटिला	$12 \times 2\frac{1}{3}$	20	9,10,11	"
XXXIX	1.	177	प्रातिमोक्षसूत्र	..	मागधी	$10\frac{2}{3} \times 2$	..	5	"
	2.	178.	सुभाषिरत्नकोश	भीमार्जुनसोम	"	"	41	12	"

V. Gu–rim–lha–khang library of Sa–skya

I		179.	वार्तिकालंकार	प्रज्ञाकरगुप्त	वर्तुल	27x4	59	10–19	II,III Chapters
II	1.	180	अमरकोशटीका(कामधेनु)	सुभूतिचन्द्र	मागधी	$22\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{2}$	9	7,8	1–8,10 Page
	2.	181.	(व्याकरणटीका)	..	"	"	1	7	16th page
	3.	182.	(विनयटीका)	..	"	$23 \times 2\frac{1}{2}$	3	7,8	Incomplete
	4.	183.	(पंचरक्षा) महामायाविद्याराज्ञी etc.	..	रंजन	$22 \times 2\frac{1}{2}$	43	6	46–68 pages Incomplete
	5.	184.	अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता	..	मागधी	$21\frac{3}{4} \times 2$	137	7	Incomplete

VI. Chhag–pe–lha–khang in Lha–Khang–Chhenmo of Sa–skya Monastery.
(Continued From Volume XXI, Part I)

I	1.	185.	प्रमाणवार्तिक–वृत्ति T	धर्मकीर्ति	मागधी	$22\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{8}$	11	7,8	Incomplete
	2.	186.	प्रमाणवार्तिकवृत्ति–टीका	कणकगोमी	"	$32\frac{1}{2} \times 2$	215	7	12,37 Missing
	3.	187.	" T	"	"	$21\frac{1}{2} \times 2$	6	7	Incomplete
II		188.	प्रमाणवार्तिकभाष्य	प्रज्ञाकारगुप्त	"	$22 \times 2\frac{1}{8}$	314	6,7,8	Complete
III		189.	अर्थविनिश्चयधर्मपर्याय T	..	कुटिला	$21 \times .1\frac{3}{4}$	108	7	108,109 Miss.
IV		190.	अमरकोशटीका(कामधेनु) T (सुभूतिचंद्र)		मागधी	$23 \times 2\frac{1}{2}$	17	7	Incomplete
	1.	191.	नवश्लोकप्रज्ञापारमिता T ..		मागधी	22 x 2	1	5	Complete
	2.	192.	अष्टसाहस्रिकापिण्डार्थ	कम्बलपाद	"	"	3	5	Complete
	3.	193.	हेवज्रसाधनोपयिक	रत्नाकरशान्ति	कुटिला	22 x 2	1–5a	6	"
	4.	194.	अष्टश्मशान	..	"	"	–5b	"	"
	5.	195.	आर्यांगुलीधारणी	..	"	"	–6a	"	"
	6.	196.	आर्यांगुलीकल्प	..	"	"	–6b	"	"
	7.	197.	मंजुश्रीगुह्यचक्र	..	"	"	–16b	"	Incomplete
V	1.	198.	विनयसूत्रवृत्ति T	गुणप्रभ	मागधी	$23 \times \frac{1}{2} \times 2\frac{1}{4}$	72	7	Incomplete
	2.	199.	प्रतिमोक्षसूत्रटीका	..	"	"	3	8	"
	3.	200.	विनयकारिका T	विशाख	कुटिला	$22 \times 1\frac{5}{8}$	14	3,5	"

VI.		201.	बोधिचर्यावतार T	(शान्तिदेव)	मागधी	22 x 2	23	6	Complete
		202.	त्रिस्कन्धदेशना	..	कुटिला	"	2	5	"
		203.	महामायातन्त्रटीका T	..	"	23 x 2	10	6,7	" (?)
VII		204.	योगचारभूमि T	(असंग)	"	$22\frac{1}{4} x 1\frac{5}{8}$	156	7	"
VIII		205.	अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिता– पंजिका T (सारतमा)		रत्नाकरशान्ति	$23\frac{1}{2} x 2$	53	7	Incomplete
IX		206.	"	".	कुटिला	23 x 2	103	6	Complete (?)
		207.	अध्यर्द्धशतक T	मातृचेट	कुटिला	$21\frac{1}{2} x 2$	5	6	Complete
X		208.	दासरसायनं	नागार्जुन	"	22 x 2	4	5	Complete
XI		209.	चान्द्रव्याकरण T	चन्द्रगोमी	"	$22\frac{3}{4} x 2$	57	6	Incomplete
		210.	"	"	"	$22\frac{1}{2} x 2$	14	6,7	"
XII		211.	(अष्टसाहस्रिकाप्रज्ञापारमिताटीका)	?	मागधी	21 x 2	8	6	"
		212.	युक्तिप्रदीप	..	कुटिला	22 x 2	3	7	Complete
		213.	गुह्यसमाजमण्डलोपायिका	भद्रपाद	"	"	1	6	Incomplete
XIII		214.	दशभूमिकसूत्र T	..	"	$24 x 2\frac{1}{2}$	57	7	"
XIV		215.	गण्डव्यूहसूत्र T	..		$24\frac{5}{8} x 2\frac{1}{4}$	481	6	"
XV		216.	सद्धर्मपुंडरीकसूत्र T	..	कुटिला	23 x 2	137	6	Complete
XVI		217.	"		रंजन	22 x 2	158	5	"
XVII		218.	पंचरक्षा T	..	मागधा	22 x 2	77	5	Incomplete
XVIII		219.	अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता T	..	रंजन (ordinary)	22 x 2	206	6	Complete
XIX	1.	220.	"	..	"	"	228	6	"
XX–XXIII		221.	शतसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता T	..	कुटिला	$24 x 2\frac{1}{4}$	1160	7,6	Complete
XXIV-XXVI		222.	"	..	रंजन (ordinary)	$21\frac{1}{2} x 1\frac{5}{8}$	201–692	5	Incomplete
XXVII		223.	"	..	"	$21 x 1\frac{3}{4}$	1–260	"	"
XXVIII		224.	"	..	"	$21\frac{1}{2} x 1\frac{3}{4}$	257	"	"
XXIX		225.	"	..	"	22 x 2	1–226	"	"
XXX		226.	"	..	"	21 x 2	1–260	"	"
XXXI		227.	"	..	"	$21\frac{1}{2} x 1\frac{5}{8}$	571–781	"	"
XXXII		228.	शुद्धाचार	वाचस्पतिमिश्र	मैथिली	$15 x 1\frac{3}{4}$	113	5	Complete
XXXIII		229.	प्रज्ञापारमिता leaves	..	मागघी		32		Incomplete
		230.	"	..	रंजन, कुटिला,		10		"
XXXIV		231.	अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारिमता T	..	रंजन (ordinary)	$22\frac{1}{2} x 2$	16	7	Incomplete
XXXV		232.	शिक्षासमुच्चय T	(शान्तिदेव)	मागघी	$22\frac{1}{2} x 2$	1	2	Incomplete
		233.	पोषधानुशंसा etc.	..	कुटिला,	मागधी		6	Incomplete
		234.	Miscellaneous leaves	..			38		"
		235.	Tibetan leaves.	..			14		
XXXVI		236.	संस्कृतपुस्तक 1	..	Tamil	$21 x 1\frac{1}{4}$	117	6	"
		237.	"	..	"	"	14	"	"

		238.	”	..	”	”	10	5,6	”
XXXVII		239.	वेस्सन्तरजातक (?)	..	Sinhalese	$18\frac{1}{4} \times 1\frac{1}{4}$	50	7	”
		240.	... नुसंसा	..	”	”	47	7	”
XXXVIII		241.	कालचक्रटीका(विमलप्रभा) T	..	”	”	”	”	

VII. Shalu Monastery (Continued from Vol.XXI, Part I)

XII	1.	242.	प्रमाणवार्त्तिकवृत्ति	मनोरथनन्दी	कुटिला	$26\frac{1}{2} \times 2$	105	7	Complete
		243.	न्यायविन्दुपंजिका T	धर्मोत्तर	मागधी	$24\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{4}$	43	6	”
XIII	1.	244.	प्रमाणवार्त्तिक T	धर्मकीर्ति	कुटिला	$12\frac{1}{2} \times 1\frac{3}{4}$	31	7	Ch. 2,3,4.
	2	245.	प्रमाणवार्त्तिक (क्रोडपत्र)		”	$12\frac{3}{4} \times 2\frac{1}{4}$	16	7,9	
	3.	246.	क्षणभंगाध्याय	(ज्ञानश्री)	मागधी	$12\frac{7}{8} \times 1\frac{1}{2}$	128	5	Complete
	4.	247.	महायानोत्तरतन्त्र-टीका T	(असंग ?)	”	$12\frac{1}{2} \times 1\frac{7}{8}$	54	6	Incomplete
XIV.	1.	248.	विनयसूत्र T	गुणप्रभ	Tibetan (U.chen)	$22\frac{1}{4} \times 2\frac{1}{4}$	62	6	Complete
	2.	249.	” टीका T	”	”	”	36	8	” (?)
	3.	250.	” (टीका)	गुणप्रभ	”	”	9	8	Incomplete
	4.	251.	” (लक्षण-टीका)		मागधी	”	6	7,8	”
	5.	252.	(लक्षण in Tibetan)		Tibetan	”	3	9	”
	6.	253.	अभिधर्मप्रदीप with विभाषा-प्रभावृत्ति		शारदा	$22 \times 2\frac{1}{8}$	63	9	”
	7.	254.	विग्रहव्यावर्तनी T	नागार्जुन	Tibetan	$22\frac{1}{4} \times 2\frac{1}{4}$	7	8	Complete
	8.	255.	स्फुटपीठादिनिर्णय		”	”	17	6,7	” (?)
	9.	256.	दोहाकोश टीका T			$16 \times 1\frac{1}{2}$	1	6	Incomplete
XV	1.	257.	वार्त्तिकालंकार T	(प्रज्ञाकरगुप्त)	मागधी	$24\frac{1}{4} \times 2$	12	7	Incomplete
	2.	258.	”	”	”	$23\frac{3}{4} \times 2$	114	7	”
XVI	1.	259.	(स्वाधिष्ठानक्रम) वृत्ति (सरह)	बन्धुकीर्त्ति	”	12×2	25	6	Complete
XVII	1.	260.	स्वाधिष्ठानक्रमविवृति		कुटिला & मागधी	$12\frac{1}{4} \times 2$	$8\frac{1}{2}$	8	Complete
	2.	261.	अभिसम्बोधिक्रम T	(आर्यदेव)	मागधी	”	2	”	”
	3.	262.	पंचक्रमविवृति T		”	”	2	”	”
	4.	263.	अनुत्तरसत्व विवृति		”	”	3 1/2	”	”
	5.	264.	पंचक्रमविवृति T	कुलोक	मागधी	”	10	8	Complete
	6.	265.	स्वप्नाध्याय		”	”	2	6	Incomplete
XVIII	1.	266.	कातन्त्रपञ्जिका T	त्रिलोचनदास	”	$12\frac{1}{2} \times 1\frac{7}{8}$	5	5	”
	2.	267.	”	”	कुटिला	$12\frac{1}{2} \times 2$	29	”	Incomplete
XIX		268.	काव्यप्रकाश	राजानकम्मट	मागधी	$11\frac{3}{4} \times 2\frac{1}{8}$	73	8,9	”
XX		269	(वज्रयानग्रन्थ)		रञ्जन	$14 \times 1\frac{1}{4}$	46	4	”
XXI	1.	270	हेरुकसाधन	दारिकपाद	कुटिला	$\frac{1}{2} \times 2$	13	6–8	”
	2.	271.	नामसंगीति T		रंजन	$11 \times 1\frac{3}{4}$	17	5	”
XXII	1.	272.	बोधिसत्वभावनाक्रम	कमलशील	मागधी	12x2	36	6	”
	2.	273.	कुरुकुल्लासाधन T		Old. मैथिली	”	4	5	Complete
	3.	274.	अमोघपाशलोकेश्वरमंडल T		”	”	2	5	Complete

	4.	275.	आदिबुद्ध etc.		"	$12\frac{1}{2} \times 2$	11	5	Incomplete
	5.	276.	योगसारभाष्य	भाष्कराचार्य N.	"	$13\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{4}$	24	5	Complete
XXIII	1.	277.	स्रग्धरास्तोत्र T	सर्वज्ञमित्र	मागधी	$11\frac{1}{2} \times 21$	9	"	"
	2.	278.	(बुद्धनमस्कार etc.)		कुटिला, माग.	$10\frac{3}{4} \times 2$	9	"	Incomplete
XXIV	1.	279.	कालचक्रटीका (विमलप्रभा) T	..	मागधी	$11\frac{1}{2} \times 1\frac{3}{4}$	20	7	Incomplete
	2.	280.	महायानलक्षणसमुच्चय	..	"	$12\frac{1}{2} \times 2$	4	7	"
	3.	281.	वज्रभैरवतन्त्रपंजिका T	कुमारचन्द्र	"	$11 \times 2\frac{1}{4}$	4	6	Complete
	4.	282.	महावज्रभैरवास्त्र राज	..	"	"	7	7	Incomplete
	5.	283.	मूलदेववाक्यश	..	कुटिला	$12\ 1\frac{3}{4}$	10	5,6	"
	6.	284.	(कामशास्त्र)	..	मागधी	$11\frac{3}{4} \times 2\frac{1}{4}$	3	8	"
	7.	285.	षडंगयोगटीका T	..	कुटिला	$12 \times 1\frac{1}{2}$	7	4,5	Complete
	8.	286.	वसुधाराधारणी	..	"	$12\frac{1}{2} \times 2$	8	5	Incomplete
	9.	287.	Miscellaneous leaves				8		
XXV	10.	288.	महामायातन्त्र T		कुटिला	$11\frac{1}{2} \times 1\frac{3}{4}$	29	4,5	Complete
XXVI	1.	289.	(तद्धित)	पाणिनि	मैथिली	$11\frac{1}{4} \times 1\frac{3}{4}$	27	6	
	2.	290.	चान्द्रव्याकरणवृत्ति T	चन्द्रगोमी	मागधी	$12\frac{3}{4} \times 2$	11	6	Incomplete
	3.	291.	चान्द्रव्याकरण T (उणादि)	"	कुटिला	$13\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{4}$	45	6	Complete
XXVII		292.	अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता T	..	रंजन	22x2	393	4	"
XXVIII		293.	"	..	"	23x2	199	6	Complete (?)
XXIX		294.	शतसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता T	..	मागधी	$24 \times 2\frac{1}{4}$	276	7	"
XXX		295.	चक्रसंवरविवृति T	भवभट	कुटिला	$22\frac{1}{4} \times 2\frac{1}{2}$	54	7	"
XXXI		296.	अमोघपाशकल्पराज T	..	मागधी	$22\frac{1}{3} \times 2\frac{1}{4}$	162	7	"
XXXII		297.	पंचविंशतिसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता T ..		"	$23\frac{1}{4} \times 2\frac{1}{4}$	252	"	Incomplete
XXXIII	1.	298.	कातन्त्रवृत्तिपंजिका T	त्रिलोचनदास	मागधी	$22\frac{1}{4} \times 2$	6	6	Incomplete
	2.	299.	चान्द्रव्याकरणवृत्ति T	चंद्रगोमी	कुटिला	$22\frac{1}{4} 2 \times \frac{1}{4}$	117	7	Complete (?)
XXXIV	1.	300	चान्द्रव्याकरणटीका	रत्नमति	मागधी	$21\frac{3}{4} \times 1\frac{7}{8}$	235	7	Incomplete
	2.	301.	" पंजिका	पूर्णचन्द्र	"	"	234–66	"	"
XXXV	1.	302.	चतुरंगसाधनटीका T (सारमंजरी)	समन्तभद्र	कुटिला	$22\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{2}$	39	7	Complete
	2.	303.	त्रिसमयोपयिक		मागधी	$23\frac{1}{4} \times 2$	6	7,8	" (?)
	3.	304.	रहःप्रदीप(सर्वरहस्यनिबंध) T	रत्नातकर–शान्ति	कुटिला	$22\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{4}$	14	7.	Complete
	4.	305.	वज्रभैरवतन्त्रपंजिका T	कुमारचन्द्र	मागधी	$22\frac{1}{4} \times 2$	$1\frac{1}{2}$	7	"
	5.	306.	कृष्णयमारितन्त्रपञ्जिका	धर्मदास	"	"	32	"	Complete
	6.	307.	(गुह्य) समाजमण्डलोपयिक T	नागबुद्धि	"	"	7	7	"
	7.	308.	वज्रामृततन्त्रपंजिका T	विमलभद्र	"	"	7	7	"

	8.	309.	कल्याणकामधेनु T	नागार्जुन	"	"	7	7	Complete
	9.	310.	प्रतिष्ठाविधि etc.	..	"	$21\frac{3}{4} \times 2$	11	6,7	Incomplete
XXXVI	1.	311.	कालचक्रटीका (विमलप्रभा) T	..	कुटिला	22x2	45	9	"
	2.	312.	महाकालचक्र	..	मागधी	$22 \times 2\frac{1}{8}$	49x5	7	Complete
	3.	313.	योगाम्बरसाधन(महायोगानुबद्ध)	..	कुटिला	$22\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{4}$	10	7	"
	4.	314.	(बोधिचित्तवज्रगाथाटीका)	..	मागधी	..	4	6	Complete
	5.	315.	(ज्योतिषवैद्यकक्रोडपत्र)	विभूतिचंद्र	"	"	12		"
XXXVII	1.	316.	तर्कज्वाला(मध्यमकहृदय) T	भगवद्विवेक	रंजन	$22\frac{1}{2} \times 2$	24	5,6	Complete
	2.	317.	अभिधर्मसमुच्चय T	..	मागधी	$21\frac{1}{2} \times 2$	17	7	Incomplete
	3.	318.	(प्रज्ञापारमिता)	..	"	"	10	5	"
	4.	319.	गुह्यसमाज T	..	"	"	10	"	"
	5.	320.	(.....सूत्र–टीका)	..	कुटिला	$22\frac{1}{2} \times 1\frac{1}{2}$	11	4,5	"
	6.	321.	(... सूत्र)	..	"	$21\frac{1}{2} \times 1\frac{1}{2}$	9x11	5	"
	7.	322.	(बोधिचित्त ..)	..	कुटिला	"	$\frac{1}{2}$	6	Incomplete
	8.	323.	त्रिसमयपूर्वसेवाविधि	जयप्रभ	"	"	1	9	Complete
	9.	324.	(साधननयोग)*	..	मागधी, कु०		2		Incomplete
	10.	325.	(हेरुक...टीका)	..	"		4	6	"
	11.	326.	(लक्षणटीका)	..	शारदा कु०		2		"
	12.	327.	(प्रज्ञापारमिताटीका)	..	कुटिला		10	6	"
XXXVIII	1.	328.	मंजुश्रीनामसंगीति T	..	कुटिला	$9 \times 2\frac{1}{2}$	14	6	Complete
	2.	329.	सिद्धैकवीरतन्त्र T	..	मागधी	$9 \times 1\frac{3}{4}$	14	4,5	Incomplete
	3.	330.	तारास्तुति(चन्द्रदास)टीका		कुटिला	"	6	9	"
	4.	331.	त्रिंशिका T	वसुबंधु	कुटिला	$12\frac{1}{4} \times 2$	81	8	Complete
	5.	332.	प्रज्ञापारिमितापिण्डार्थ	दिङ्नाथ	मागधी	"	2	8	"
	6.	333.	त्रिंशतिका ... कारिका	असंग	"	"	3	"	Incomplete
	7.	334.	(गुणापर्यन्त ....T)	दिङ्नाथ	"	"	I	"	"
	8.	335.	गुह्येन्द्रतिलककल्पराज	..	कुटिला	$11\frac{3}{4} \times 2$	37	8	"

VIII. Rta–nag Thub–stan Monastery (Tsang)

I		336	(लंकावतार ?) सूत्र T	..	रञ्जन	22x2	250	6	Incomplete
II	1.	337	...... सूत्र	"	"	$22\frac{1}{2} \times 2\frac{1}{2}$	50	5	"
	2.	338.	...... सूत्र	..	कुटिला	$21\frac{1}{2} \times 2$	2	5	"
	3.	339.	...... तंत्र	..	"	$16\frac{3}{4} \times 2\frac{5}{8}$	15	3	"

IX. Ngor Monastery (Continued from JBORS., XXI, Part I)

XL	340.	अभिधर्मकोशभाष्य T	वसुबन्धु	मागधी	$12 \times 2\frac{1}{2}$			Complete
XL	341.	दोहाकोश T	सरह	कुटिला	$10 \times 2\frac{1}{2}$			"

IX Shalu Monastery (continued from Vol. XXI, Part I, pp 8–10 and Vol. XXIII, Part I, pp 33–52)

XXXIX	1.	342.	क्षणभंगाध्याय	(ज्ञान श्रीमित्र)	मागधी	22" x 2"	62	7	Complete
	2.	343.	व्याप्तिचर्चा	(")	"	"	9	"	"
	3.	344.	भेदाभेदपरीक्षा	(")	"	"	1–2	"	"
	4.	345.	अनुपलब्धिरहस्य	(")	"	"	2–6/2	"	"
	5.	346.	सर्वशब्दाभावचर्चा	(")	"	"	6/2–8	"	"
	6.	347.	अपोहप्रकरण	(")	"	"	8–20	"	"
	7.	348.	ईश्वरदूषण	(")	"	"	20–33	"	"
	8.	349.	ईश्वरवादाधिकारव्याख्या	(")	"	"	33–54	"	"
	9.	350.	कार्यकारणभावसिद्धि	(ज्ञान श्रीमित्र)	मागधी	22" x 2"	54–56	7	Complete
	10.	351.	योगिनिर्णय	(")	"	"	56–65	"	"
	11.	352.	अद्वैतबिन्दुप्रकरण	(")	"	"	65–72	"	"
		353.	साकारसिद्धि	"	"	"	72–122	"	"
	13.	354.	साकारसंग्रहसूत्र	"	"	"	122–37	"	"
XL	1.	355.	(श्रावक, भूमि) (असंग)		कुटिला	$20\frac{1}{2}'' \times 2\frac{1}{8}''$	126	7,8	Incomplete
	2.	356.	आभिप्रायिक गाथानिर्देश		कुटिला	$20\frac{1}{2}'' \times 2\frac{1}{8}''$	4	7,9	Incomplete
XLI		357.	बोधिसत्त्वभूमि असंग		"	12 x 2	226	7	Complete
XLII	1.	358.	कातंत्रपंजि᳚. त्रिलोचनदास		मागधी	$12 \times 2\frac{1}{4}$	57	7	Incomplete
XLIII	1.	359.	अद्वयसमताकल्पराज		कुटिला	21x2	22	7	"
	2.	360.	चतुर्योगिनीसंपुटतंत्रराज		"	"	6	6	Complete
	3.	361.	वज्रडाकतंत्रटीका		"	"	24	7	Incomplete
XLIV		362.	बलितत्व	रत्नशील	मागधी	$22 \times 1\frac{3}{4}$	16	5	Complete
XLV	1.	363.	पचक्रमटिप्पणी	मुनिश्रीभद्र	कुटिला	13 x 2	50	5	"
	2.	364.	वज्रसत्त्व साधन	लीलावज्र	"	$13\frac{1}{2} \times 2$	4	7	"
	3.	365.	योगरत्नमालाटिप्पणी	बन्धुकीर्ति	मागधी	$12\frac{1}{2} \times 2$	22	3	Incomplete X
	4.		Leaves*		कुटिला	$13\frac{1}{2} \times 2$	5	5	"
XLVI		366.	(Astrology)		मैथिली	15 x 1	35	3	Incomplete
I	1.	4	(सूत्र–धारणीसंग्रह)		रंजन (ordinary)	$21 \times 1\frac{3}{4}$	100	5	Incomplete
	2.	5	(व्याकरण)	"	मागधी	22 x 2	26	4–6	Incomplete
	3.	367.	(काव्य)		कुटिला	22 x 2	5	6	"
I	1.	6	त्रिदण्डमाला	अश्वघोष	कुटिला	$22 \times 1\frac{3}{4}$	115	5	Leaf 107 Missing
	2.	7	परिकथा		"	"	57	"	Complete
III	1.	8	मध्यान्तविभागकारिका *	मैत्रेयनाथ	मागधी	$8\frac{1}{4} \times 2\frac{1}{4}$	8	7	Complete
	2.	368.	धर्मधमंताप्रविभागसूत्र	"	"	"	5	"	"
	3.	9.	अभिसमयालंकार	"	"	"	20	"	"

T. Preserved in Tibetan translation.

***.** Written on paper.

1. In Tamil Grantha.

2. In Sinhalese language

3. Except three leaves all on paper.